हरिवंशपुराण समीक्षा।

(प्रथम भाग)

हरिवंश की उत्पत्ति।

श्रीमुनि सुव्रतनाथ और श्रीनेमिनाथ भगवान का जन्म जिस वंश में हुआ है वह हरिवंश के नाम से प्रसिद्ध है और हरिवंशपुराण में इस वंश के अनेक महापुरुषों की विस्तर कथा वर्णन की गई है, इस पुराण में इस वंश की उत्पत्ति इस प्रकार लिखी है कि श्रीशीतलनाथ दसवें तीर्थङ्कर के तीर्थ कौशांबी नगरी में सुमुख नाम का एक राजा राज्य करता था, उस समय यह नगरी ऐसी स्त्री के समान सुन्दर थी जो भूषण और वस्त्रों से शोभित हो और अपने चूतड़ और छातियों के बोझ को न सहार सकती हो वा यह नगरी ऐसी व्यभिचारिणी स्त्री के समान थी जो चित्र विचित्र के रत्न जड़ित भूषणों से सजधज कर रात को प्रसन्न मुख से अपने अनेक प्रेमियों के मुख को चूमती हो।

एकवार वसन्त ऋतु में यह राजा वन की सैर को जारहा था, उस समय वन में ढाक के वृक्ष फूल कर ऐसे लाल होरहे थे मानो बिछुड़े हुए स्त्री पुरुषों के विरह की आग ही धधक रही हो, अशोक वृक्ष ऐसे युवा पुरुषों के समान मालूम होते थे जिनके शरीर के रोंगटे झंकार करती हुई पाजेबों वाली स्त्री के कोमल चरणों के स्पर्श से खड़े होजाते हैं, मौलसिरी के वृक्ष स्त्रियों के मद्य के कुरलों से खूब फूल रहे थे, उस समय फूले हुए तिलक वृक्षों ने वन लक्ष्मीरूपी स्त्री को पुष्पवती बना दिया था और जिस प्रकार कोई पुरुष चिरकाल से बिछुड़ी हुई अपनी प्यारी को छाती से लगा कर पुष्ट और पुष्पवती कर देता है इस ही प्रकार वसन्त ने भी मालती की सूखी हुई बेल को हरीभरी कर दिया था।

वन में सुन्दर सुन्दर स्त्री पुरुष झूला झूल रहे थे, कोई २ स्त्रियों के प्रेमी खूब शराब पीरहे थे, पशुओं में भी उस समय कामदेव जाग उठा था, हरिण अपने मुंह में घास ले लेकर हरिणी के मुंह में देरहा था और हरिणी हरिण के मुह में देरही थी सच है अपने प्यारे की तो सूंघी हुई चीज भी बड़े आनन्द के देने वाली होजाती है,

उस समय हाथी अपनी हथनियों को चूम चूम कर मस्त कर रहे थे और भ्रमर भ्रमरी भी एक दूसरे को चूम कर आनन्द मना रहे थे।

जब राजा की सवारी नगर में को निकली तो नगर की सब स्त्रियां अपने मकानों से राजा के रूप का पान करने लगीं, उन स्त्रियों में साक्षात् रति के समान एक अति ही मनोहर स्त्री भी थी जिसका मुख चन्द्रमा के समान, नेत्र कमल के समान, दोनों होठ बिम्बाफल के समान, कण्ठ शङ्ख के समान, दोनों छाती चकवों की जोड़ी के समान थीं, कमर बहुत पतली, नाभि बहुत गहरी, दोनों जघन गठे हुए, नूतड़ कदरूफल के समान और चरण, उरु और जङ्घा बहुत शोभायमान थीं, अचानक राजा की निगाह उस स्त्री पर पड़ी और वह देखते ही उस पर आशक्त होगया और मन में कहने लगा कि यह स्त्री तो अपने रूप के जाल से मेरे चित्त को वारम्बार अपनी तरफ़ खैंच रही है अगर हृदय को आनन्द देनेवाली इस मणि के साथ विलास न किया तो मेरा यह ऐश्वर्य और यौवन सब व्यर्थ ही है।

वह राजा भी बहुत रूपवान था इस वास्ते वह स्त्री भी राजा को देख कर कामदेव की भड़क से व्याकुल होगई और राजा के साथ सैनामैनी करने लगी, कभी वह कटाक्ष फेंकती फिर हटा लेती कभी राजा के नेत्र से नेत्र भिड़ाती कभी अपने होंठ, छाती, नाभी, कमर और चरण दिखाती और कभी तिर्छी निगाह से घूरती इस वास्ते उसने राजा के कामदेव को विल्कुल ही भड़का दिया, आमने सामने की डटी हुई निगाह से उन दोनों ने आपस में बात कर ली अर्थात् उस स्त्री का मन तो राजा ने ले लिया और अपना मन उसको दे दिया, मानो दोनों ने फिर मिलने की आपस में साई ही दे दी।

राजा वन में जाकर जल्दी ही घर लौट आया और मन्त्री से अपने चित्त की सब व्यथा वर्णन करके कहा कि अगर आज ही मेरा और उसका मिलाप न हुआ तो न मैं जीता बचूंगा और न वह जीती बचैगी, न मैं उसके बिदून रह सकता हूं और न वह मेरे बिदून रह सकती है, अगरचि इस कुकर्म से इस जन्म में मुझ को अपयश मिलैगा और परभव में खोटी गति होगी लेकिन कामान्ध होने के कारण इस समय मुझे कुछ नहीं सूझता है, हां जीता रहूंगा तो इस पाप के दूर करने के अनेक उपाय कर लूंगा।

मन्त्री बहुत बुद्धिमान था उसने राजा को धीरज बंधाया और विश्वास दिलाया कि वह एक सेठ की स्त्री है और आज ही तुम्हारे पास आ जावेगी, रात होने पर मन्त्री ने एक चतुर दूती को उसके पास भेजा, सेठानी ने भी दूती से अपने दिल

का सच हाल बता दिया और कहा कि राजा को देखकर मैं कामदेव के वश में होगई हू और अब मुझे किसी तरह भी चैन नही पडती है, जब तक मैं राजा के शरीर का स्पर्श न कर लूंगी तब तक किसी तरह भी मेरे चित्त को शान्ति न होगी।

दूती सेठानी को समझा बुझाकर अपने साथ राजमहल में ले आई, राजा ने ज्यों ही अपने मन को चुराने वाली इस सेठानी को अपने पास आते देखा तो बहुत ही खुश हुआ और उसका बहुत २ स्वागत करने लगा, उस समय सेठानी को कुछ लज्जा आगई इस वास्ते उसने अपना मुख और छातिया अपने हाथ से ढक ली, तब राजा ने उसका हाथ पकड कर अपनी सेज पर विठा लिया।

योवन से मस्त राजा और सेठानी को भोग विलास करते देख उनकी नकल करने के लिये ही मानो रात्रिरूपी स्त्री के मुख को प्रसन्न करने के लिये चन्द्रमा आकाशरूपी सेजपर आ विराजे अर्थात् चांद भी निकल आया, उस समय जिस तरह राजा के हाथों के स्पर्श से सेठानी का हृदय प्रफुल्लित होरहा था उस ही तरह चन्द्रमा के उदय से कुमुदिनी प्रफुल्लित होने लगी।

आपस में प्रेमबन्ध की वृद्धि के लिये राजा और सेठानी स्त्री पुरुषों में होने वाले भाव प्रगट करने लगे, मीठे मीठे वचनों से विश्वास दिलाकर नवीन सगम के समय जिसका भय दूर कर दिया था ऐसी उस सेठानी को राजा ने खूब जोरसे चिपटा लिया, वह दोनों कामी कभी परस्पर भुजाओं से आलिङ्गन करते, कभी एक दूसरे को चूमते, चूसने और काटते, कभी कण्ठ और बालों को पकडते और कभी वे दोनों मिलकर एक दूसरे का अङ्ग प्रत्यङ्ग स्पर्श करते, इस तरह काम की अग्नि से पूरी तरह भडके हुए वह दोनों अनेक प्रकार की क्रीडा करने लगे, उस समय प्रत्येक प्रकार की चतुराई से उस कामनी सेठानी ने राजा को बहुत आनन्द दिया, क्रीडा करते करते जब वह दोनों थक गये और दोनों ही पसीने में डूब गये तो वह दोनों आपस में चिपट कर सो रहे।

इस प्रकार प्रबल विषय वासना से जिनकी आत्मा ज्ञानशून्य होगई थी और जिनका चित्त प्रेम के बन्धन में बिलकुल जकड़ा हुआ था और वह निद्रामें मग्न थे उस समय मानो उनका हाल जानने के लिये ही सूर्य भगवान ने प्रभात को भेजा अर्थात् सुबह होगई, उस समय अति मनोहर चन्द्रमा और प्रभात से शोभित आकाश ऐसा रमणीक मालूम होता था मानो वह आकाश ऐसी नवीन वधू के समान जो राजा सुमुख के द्वारा निश्चिन्तता से भोगी गई हो अर्थात् कामनी सेठानी के समान वह आकाश भी एक सुन्दर स्त्री ही हो; जिस प्रकार समवसरण में विराजमान होकर श्रीजि-

नेन्द्रदेव संसार के जीवों को प्रबुद्ध करते हैं, इस ही प्रकार सूर्यदेव ने सुन्दर सेजपर सोये हुए राजा और सेठानी को जगा दिया।

ज्यों ही इनके शरीर ने सुबह की मन्द सुगन्धि पवन का स्पर्श किया त्यों ही उनकी सब थकावट दूर होगई और कुछ देर पहिले जो आपस में चिपटे रहने को ही उनकी इच्छा प्रबल होरही थी वह भी अब आहिस्ता २ कम होने लगी, जिस प्रकार जवान और मस्त हंस अपनी हंसनी के साथ बहुत शोभायमान मालूम होता है इस ही प्रकार वह राजा भी अपनी सेजसे उठकर कामनी सेठानी के साथ बहुत रमणीय जान पडने लगा, जिस प्रकार विरही पक्षियों का हृदय रात के समय अपनी प्राण-प्यारियों से रत्ती भर भी जुदा होना नहीं चाहता उस ही प्रकार अति अनुरागी राजा और सेठानी के हृदयों ने भी वियोग सहने की जरा भी इच्छा प्रगट न की इस कारण राजा ने उस कामनी सेठानी को उसके घर न जाने दिया सो ठीक ही है क्योंकि जिस मनुष्य ने अति ही दुर्लभ अपने अभीष्ट पदार्थ को पाकर उसका स्वाद ले लिया है तो वह उसे कैसे छोड सकता है राजा ने उस सेठानी को अपने ही महल में रख लिया और उसको अपनी सब रानियों में मुख्य पटरानी बना दिया।

एक दिन एक महामुनि राजा के घर आगये राजा और सेठानी ने बडी भक्ति के साथ अष्टद्रव्य से उनकी पूजा की और विधिपूर्वक आहार दिया जिससे उन्होंने अगले जन्म में भी एक साथ भोग भोगने की प्राप्ति कराने वाले उत्तम पुण्य का सञ्चय किया और पापों का नाश किया, इस प्रकार पुण्य फल को भोगता हुआ राजा का समय कामनी सेठानी के साथ आनन्द से बीतता रहा, एक दिन यह राजा मणि-जडित अति सुन्दर महल में अनेक गुणों की माला सेठानी के साथ सोरहा था कि उन दोनों का आयु कर्म पूरा होगया अचानक बिजली गिरी और वह दोनों एक साथ ही मर गये।

इन दोनों ने मुनि को आहार देने से बहुत पुण्य कमाया था इस कारण साथ ही रहने की अभिलाषा रखने वाले वह दोनों विजयार्ध में विद्याधर राजाओं के यहां पुत्र पुत्री हुए।

राजा और सेठानी ने यह निदान किया था कि अगले जन्म में भी हम साथ ही भोग भोगें इस वास्ते ऐसे कुलों में उनका जन्म हुआ जिससे आपस में विवाह होजावे और उनके युवा होनेपर उस ही के अनुसार उनका विवाह होगया, इन दोनों को अपने पहिले भव की भी याद थी, राजा का जीव कामजनित हावभाव करने में बहुत होशियार था। कामदेवरूपी नृत्यकाचार्य की शिक्षा से शिक्षित था इस कारण

वह स्त्री सम्भोगरूपी नाटकघर में लाई हुई नर्तकी अर्थात् सेठानी के जीव के साथ आनन्द से भोग भोगने लगा, संसार में जो बातें दूसरो के वास्ते दुर्लभ हैं वह सब इन दोनों के लिये सुलभ थी अर्थात् पुण्योदय से इनको दुनिया के सब ही पदार्थ प्राप्त थे।

अब जरा सेठ की कहानी भी सुन लीजिये, वह कुछ दिन तक तो अपनी स्त्री के वियोग में तडपता रहा फिर आखिर को दिगम्बर मुनि होगया और मरकर स्वर्ग का देव हुआ और स्वर्ग की देवागनाओं के साथ खूब भोग भोगने लगा, एक दिन अचानक ही उसको अपने पहिले जन्म की स्त्री की याद आगई और अवधिज्ञान से मालूम हुआ कि राजा और वह स्त्री दोनों ही मरकर विद्याधर विद्याधरी होगये हैं और अब भी दोनों मिलकर खूब भोग भोग रहे हैं, इस पर वह देव क्रोध में भर गया और विचार करने लगा कि इस दुष्ट ने अपने राजा होने के घमण्ड में मेरी स्त्रीको घर में डालकर मेरा ऐसा भारी अपमान किया था अब मैं इससे बहुत ज्यादा बलवान हूं इस वास्ते अगर अब भी मैंने इस दुष्ट को दुगना नुकसान न पहुंचाया तो मेरे इस देवपने ही को धिक्कार है, ऐसा विचार करते करते मारे क्रोध के उसका सारा शरीर भभक उठा और उसने पूरा पूरा बदला लेने की ठान ली और पृथिवी पर आकर उस विद्याधर और विद्याधरी को पहिले भव की याद दिलाकर धमकाया और कहा कि जैसा पहिले भव में तुमने मुझको दुख दिया था वैसाही अब मैं तुमको दुख देने आया हूं, यह सुनकर वह दोनों थर थर कापने लगे, देव ने उन दोनों को उठाकर दक्षिण भरतक्षेत्र में ला पटका, यहां एक चम्पापुर नाम की नगरी है जिसका राजा उस समय मर चुका था, देव ने इनको इस नगर का राजा और रानी बना दिया और स्वर्ग को वापिस चला गया, इस राजा के मातहत अनेक राजा थे, यहा का राज्य पाकर राजा ने अखण्डित प्रेम वाली सेठानी के जीव अर्थात् उस विद्याधरी के साथ बहुत काल तक विषय सुख भोगा, पुण्य के उदय से उनके हरिनाम का पुत्र हुआ जो बड़ा तेजस्वी था, इस ही हरि के नामसे आगामी को इस वंश का नाम हरिवंश हुआ।

समीक्षा।

(१) इस कथा में जिस राजा ने सेठ की स्त्री को घरमें डाल लिया था, नाम उसका सुमुख था अर्थात् सुन्दर मुख वाला, तब ही तो सेठानी इस पर मोहित हुई थी, सेठानी का नाम था वनमाला, वन की सैर को जाते हुए राजा इस पर आशक्त हुआ था इस वास्ते सेठानी का यह ही नाम उचित भी था, राजा के मन्त्री का नाम सुमति अर्थात् उत्तम बुद्धि वाला था, ग्रन्थकर्त्ता ने भी उसको बहुत ही ज्यादा बुद्धि-

मान लिया है क्योंकि उसने राजा को इस बुरे काम से रोका नहीं बल्कि तसल्ली करी कि आज ही वह स्त्री आप के पास आ जावेगी और फिर एक चतुर दूती भेज कर तुरन्त ही सेठानी को राजमहल में बुलवा भी दिया, दूती का नाम आत्रेयी अर्थात् रजस्वला था स्त्री रजस्वला होने के पश्चात् ही ता पुरुष के पास जाने योग्य होती है इस वास्ते इस दूती का यह नाम भी बहुत ही ठीक था और सेठ का नाम था वीरक अर्थात् घटिया मर्द तब ही तो उसकी स्त्री दूसरे के पास भाग गई और यह कुछ भी न कर सका।

गरज इस कथा के सब ही पात्रों के नाम ऐसे हैं मानो विधाता ने पहिले से ही सोच विचार कर रक्खे हों इससे इस कथा का बनावटी होना स्पष्ट सिद्ध है।

(२) यह सारी कथा हरिवंश की उत्पत्ति दिखाने के वास्ते वर्णन की गई है परन्तु क्या यह आश्चर्य की बात नहीं है कि राजा हरि जिसके महाप्रताप से उसके वंश का नाम हरिवंश हुआ उसकी कथा तो केवल दो ही शब्दों में पूरी करदी और उसके प्रताप की एक भी बात न दिखाई परन्तु उसके पूर्वजों में से एक के पूर्व जन्म के कथन में अर्थात् राजा सुमुख और सेठानी के व्यभिचार के वर्णन में पृष्ठ के पृष्ठ लिखे डाले क्या इससे यह अनुमान लगाना अनुचित है कि यह कथा श्रीपरमवीतरागी सर्वज्ञ देव की कही हुई नहीं है बल्कि शृङ्गार रस दिखाने के वास्ते गढ़ी गई है।

(३) सेठ वीरक के जीव स्वर्ग के देव ने जब अपने पूर्व जन्म की सेठानी और राजा सुमुख के जीव को विद्याधर की पर्याय में भी आपस में मौज करते देखा तब उसको इतना क्रोध आया कि उसका सारा शरीर भबक उठा और उसने अपने आपको धिक्कारा और बदला लेने का पक्का इरादा किया, परन्तु आश्चर्य है कि उसने उन दोनों को उठाकर चम्पापुर नगर में जा पटका और वहां का राजा और रानी बना दिया; जिससे वह दोनों वहां भी महाप्रतापी होकर आपस में खूब भोग भोगते रहे इससे स्पष्ट सिद्ध है कि कथा ठीक नहीं बनसकी है और बिलकुल बेजोड़ और अप्राकृतिक होगई है।

(४) कोई कारण मालूम नहीं होता है कि ग्रन्थकर्त्ता को राजा सुमुख और सेठानी के व्यभिचार के वर्णनमे क्यों अपनी सारी काव्य चतुराई खर्च करने की जरूरत पड़ी और इस पाप कथा की शोभा बढ़ाने के वास्ते इस सारे ही कथन को महा-कामरस से पागना पड़ा जैसा कि प्रथम ही कोशाम्बी नगरी को व्यभिचारिणी स्त्रीकी उपमा देना, फिर वनको शोभाके वर्णन में वनके वृक्षों और पशु पक्षियों को भी काम से मस्त बनाकर कामचेष्टा करते हुए दिखाना और कामरस का खूब ही गहरा रङ्ग

चढ़ाना फिर सैठानी के आंगोपाङ्ग और नख शिख की शोभा का खूब जी खोलकर वर्णन करना, फिर दूती के द्वारा सेठानी के राजाके घर आने पर उनकी सब पापमयी गुप्त क्रियाओं को खोल खोलकर दिखाना और उनकी काम चतुराई की प्रशंसा करना और इस वर्णन में सूर्य, चन्द्रमा और आकाश को भी कामरस में ही भिगो देना और सब तरफ कामरस का ही रङ्ग बांध देना, हमें आश्चर्य है कि अगर यह वर्णन भी काम कथा और विकथा नहीं है तो और कौन ऐसी कथा हो सकती है जिसके पढने सुनने की मनाही जैन सिद्धान्त में की गई है।

(५) मुनि महाराजों के वीतराग परिणामों की प्रशंसा जैन ग्रन्थों में इतनी ज्यादा की गई है कि जिसके कारण आजकल के लोगों को मुनिधर्म धारण करने का साहस ही नहीं होता है, श्रीआचार्य तो मुनि महाराजों के भी सर्दार होते हैं इस वास्ते उनके वैराग्य और ऊंचे चरित्र का तो कहना ही क्या है, इस कारण श्रीआचार्य महाराजों के द्वारा ऐसे बढिया शृङ्गाररस का गूंथा जाना बिल्कुल ही असम्भव है और एक महाव्यभिचार कथन के वर्णन में काव्यरस और कामरस का ऐसा रङ्ग बांधना तो असम्भव से भी ज्यादा महाअसम्भव है और ग्रन्थकर्त्ता के आचार्य होने पर भारी सन्देह डालता है।

(६) इसमें तो कोई भी सन्देह नहीं हो सकता है कि इस कथाके पढ़ने और सुनने से आजकल के साधारण स्त्री पुरुषों पर बहुत बुरा असर पडता है और यह कथा कामवासना को उत्तेजित करने का एक प्रबल कारण है।

(७) यदि यह कहा जावे कि संसार के लोगों को धर्म से ऐसी अरुचि होरही है कि वह ऐसी मजेदार काम कथाओं के ही लालच से धर्म के दो बोल पढ़ या सुन सकते हैं जैसा कि इस ही हरिवंशपुराण के २९वें सर्ग में लिखा है कि समस्त मनुष्यों के कौतूहल के वास्ते एक जैन मन्दिर में कामदेव और रति की मूर्त्ति विराजमान की हुई थी, बहुत लोग कामदेव और रति की मूर्त्तियों को देखने के कौतूहल से उस जैन मन्दिर में आते थे और वहां जिनेंद्र भगवान की मूर्त्ति को भी देखकर जैनधर्म के गाढ़-श्रद्धानी होजाते थे, यह जैन मन्दिर कामदेव के मन्दिर के नाम से प्रसिद्ध था और जो लोग इस मन्दिर को देखने के लिये कौतूहलवश आते थे उनको जैनधर्म का श्रद्धान कराने में यह मन्दिर कारण था, तो इसका जवाब यही हो सकता है कि कामदेव के मन्दिर की यह कथा चौथेकाल की है इस कारण इस कथा के अनुसार शायद चौथेकाल में ही ऐसे लोग हों जिनके वास्ते जैन मन्दिर में भी कामदेव और रति की मूर्त्ति विराजमान करनी पडे और धर्म ग्रहण कराने के वास्ते

ऐसा लालच शायद तब ही उचित समझा जाता होगा परन्तु इस पञ्चमकाल के मनुष्यों की ऐसी बुरी दशा नहीं है कि वह व्यभिचार कथा के बहाने से ही धर्म के दो बोल सुन सकते हों बल्कि आजकल का तो सत्य की खोज और परीक्षा का जमाना है इस वास्ते आजकल तो वह ही धर्म कथन रुचता है जिसमें ऐसे खोटे कथन न हों और जिससे वास्तविक कल्याण की आशा हो और यदि वास्तव में आजकल भी ऐसी ही दुर्दशा है कि ऐसी व्यभिचार कथाओं के बिदून कोई धर्म का एक शब्द भी सुनना पसन्द नही करता है तो वह लोग इन व्यभिचार कथाओं को सुनाने और इन कथाओं को अति रोचक और शोभायमान बनाने से भी सच्चा जैनधर्म स्वीकार नही कर सकते हैं, हां जिस प्रकार कोई २ महाकामान्ध पुरुष किसी मुसलमान वेश्या पर आशक्त होकर मुसलमान होजाते हैं और उनके वेश्यागामी रहते हुए भी मुसलमान लोग उनके मुसलमान होनेसे अपने धर्मकी वृद्धि समझने लगें और उत्सव मनाने लगें, इस ही प्रकार अगर व्यभिचार कथाओं के सुनने या कामदेव और रतिकी मूर्त्ति के दर्शन मिलने के लालच में कोई अपने आपको जैनी कहने लगे और इससे हमारे जैनी भाई जैनधर्म का प्रचार समझ लें तो कुछ कहना ही नहीं है।

(८) हम तो इस अवसर पर जैनधर्म के सच्चे प्रेमियों को ललकार कर कहते हैं कि भाइयो! इस कल्याणकारी जैनधर्म की रक्षा करो और इस पवित्र धर्म को इस प्रकार के लाछनों से बचाओ और शुद्ध और पवित्ररूप में इसको दुनियां के सामने रक्खो जिससे सत्य के खोजी इसको ग्रहण करके अपनी आत्मा का कल्याण करें, निश्चय मानो कि जबसे जैनधर्म के कथनों के साथ ऐसी ऐसी कथाओं को मिलाकर उनको भी जिनवाणी बताया जाने लगा है तब ही से दुनियां के लोगोंको जैन सिद्धान्तों पर भी संदेह होने लगा है और तब ही से जैनी लोग घटते २ सिर्फ १२ लाख रह गये हैं और दिन २ घटते जाते हैं, यदि आप जल्दी नहीं चेतेंगे और लोक बुराई के कारण इस प्रकार के खोट निकालने का उद्यम नहीं करेंगे तो फिर सिवाय पछतावे के और कुछ भी हाथ न आवेगा।

(९) दिन दहाड़े व्यभिचार करते हुए और ऐसा महाजुल्म और महापाप करते हुए कि सेठानी का पति तो अपनी स्त्री के वास्ते तड़पता फिरै और सेठानीजी डंके की चोट राजा के साथ व्यभिचार करती रहै, तो भी वह राजा और सेठानी जैनधर्मी ही बने रहैं और ऐसे ऊंचे दर्जे के जैनधर्मी बने रहैं कि एकबार मुनि को आहार देने से ही उनके पाप दूर होजावें और इतने भारी पुण्य की प्राप्ति होजावे कि अगले जन्म में भी उनको आपस में भोग भोगने का समागम जुड़ जावे, वाह

भाई व्यभिचारियों वाह, मुनि को आहार देने से पहिले भी अपने व्यभिचार में रत रहते हुए और आहारदान देने के पश्चात् भी मरते दम तक इस महापाप को न छोड़ते हुए यहां तक कि आहारदान देते समय भी यह इच्छा रखते हुए कि हमारी यह पाप की जोड़ी बराबर बनी रहै और यहां तक प्रबल इच्छा रखते हुए भी कि यह हमारी जोड़ी अगले जन्म में भी बनी रहै और दोनों पापी मिलकर ही मुनिराज को आहार देते हुए भी तुमने मुनिराज को एकबार भोजन खिला कर महापुण्य की प्राप्ति कर ली और ऐसे पुण्यकी प्राप्ति कर ली जिससे यह तुम्हारा महापाप का जोड़ा अगले जन्म में भी बना रहा, इस वास्ते तुमको और तुम्हारे महापाप को भी धन्य है और तुम्हारे सतयुगको भी धन्य है, परन्तु हम ठहरे पञ्चमकालके जीव इस कारण हमारा तो इस कथा के नाम से ही हृदय कांपता है और भय होता है कि इस निकृष्ट पञ्चमकाल में तो इस पुण्य कथा का बुरा ही असर इसके पढ़ने सुनने वालों पर पड़ता होगा।

(१०) इन दोनों व्यभिचारियों अर्थात् राजा और सेठानीकी प्रबल इच्छाथी कि वह अगले जन्म में भी साथ ही भोग भोगते रहैं इस वास्ते उनका यह निदान पूरा हुआ, परन्तु उनका यह निदान किसी महापुण्य के प्रतापसे पूरा हुआ या किसी महापापके उदय से, यहप्रश्न इस स्थानपर अवश्य उठताहै क्योंकि उनका सम्बन्ध महापापमयी व्यभिचारी सम्बन्ध होने के कारण उनकी आपस की प्रीति और आपस में भोग भोगनेकी इच्छा भी व्यभिचार जन्य और पापमयी ही थी और उनकी यह इच्छा इतनी अधिक तीव्र होने से कि अगले जन्म में भी हमारे यह आपस के भोग बने रहैं, उनकी इच्छा और भी अधिक पापमय होगई थी।

(११) यदि उनकी यह इच्छा किसी महापुण्य के प्रताप से पूरी हुई तो क्या महाकामी और महाव्यभिचारी होना और काम भोग की अति तीव्र इच्छा रखना ही कोई ऐसा महापुण्य है जिसकी वजह से ऐसी इच्छा पूरी होजाती है, या क्या मुनि को आहार देने की वजह से उन व्यभिचारियों की यह काम इच्छा पूर्ण हुई, उनकी यह इच्छा इन दोनों कारणोंमें से किसी भी कारणसे पूरी हुई हो परन्तु ऐसे पापियों की यह इच्छा पूर्ण होना भोले मनुष्यों के भावों को बिगाड़ने और जैनधर्म के गौरव को घटाने का प्रबल कारण अवश्य है।

(१२) इससे भी ज्यादा इस कथा में उनके पापकी प्रशंसा इसबात से होती है कि अगले जन्ममें उनको अपने पहिले भवकी याद भी रही जिससे उनको यह फ़ायदा हुआ कि व्यभिचारजनित जो आपस का प्यार उनको पहिले जन्म में होगया था

उस ही पापमयी प्यार और उन हीं पापमयी भावों का सिलसिला इस जन्म में भी जारी रहा और इस दूसरे जन्म में भी उनका वह ही आनन्द जमगया जो पहिले जन्म में उनके अनुचित मिलाप के कारण जम रहा था, परन्तु यह महाआनन्द की याद अर्थात् पहिले जन्म के आपस के व्यभिचार का याद आजाना किस पुण्य के प्रताप से हुआ, इसका कारण भी वह ही दोनों बातें हो सकती हैं अर्थात् राजा और सेठानी की पर्याय में व्यभिचारजन्य प्रेम की अति तीव्रता और इन दोनों व्यभिचारियों का मिलकर एकवार मुनि को आहार देना।

(१३) दो स्त्री पुरुषों को यह याद आजाना कि पहिले जन्ममें हमारा सम्बन्ध व्यभिचार सम्बन्ध था और बहुत ही बड़े गाढ़ प्रेम का सम्बन्ध था जो मरते दम तक क़ायम रहा था और उस महापापमयी सम्बन्धके बने रहने की हमारी यहां तक प्रबल इच्छा थी कि वह अगले जन्ममें भी न टूटे और हमारी वह इच्छा पूर्ण होकर हमारी वह जोड़ी फिर ज्यों की त्यों बन गई है, क्या उन दोनों स्त्री पुरुषों में पूर्व जन्म के व्यभिचार जन्य भावों की जाग्रती नहीं करा देता है और क्या आगामी को भी पाप बन्ध का कारण नहीं होजाता है।

(१४) कुछ हो परन्तु हम इतना कहे बिदून नहीं रह सकते हैं कि यह कथा लोगों के परिणाम बिगाड़ने में ऐसा ही काम देती है जैसा कि फूंस के वास्ते आग की चिंगारी।

श्रीमुनि सुव्रतनाथ तीर्थंकर की कथा।

श्रीमुनि सुव्रतनाथ बीसवें तीर्थंकर भी इस ही हरिवंशमें हुए हैं राजा सुमित्र इनके पिता और पद्मावती इनकी माता थीं, इन्द्रादिक देवों द्वारा पांच कल्याणकों का किया जाना, गर्भ समय माताको सोलह स्वप्ने आना आदि सब ही बातें जो तीर्थंकरों के वास्ते नियमित हैं हुई।

युवा होजाने पर अतिशय कमनीय भगवान का विवाह ऐसी रमणियों के साथ हुआ जो बाल युवा वृद्ध तीनों अवस्थाओं में परमसुन्दरी रहने वाली हों, उन्होंने बहुत काल तक राज्य किया और नाना प्रकार के विषय सुख भोगे।

शरदऋतु आने पर जब यह ऋतु सुन्दर स्त्री की उपमा धारण कर रही थी, कमल इसका मुख था बंधूक वृक्षों के पत्ते उसके लाल २ होंठ थे, जंगल की सफेद कांस उसके चँवर थे और जल इसके वस्त्र थे, उस समय रोधरूपी नितंबों से भरते हुए, जलरूपी वस्त्रों से मंडित, भंवररूपी नाभि से रमणीय, मीनरूपी नेत्रों से मनोहर

फेनरूपी चूड़ामणियोंसे अलंकृत, तरंगरूपी विशाल भुजाओं से भूषित, नदीरूपी रमणियां क्रीड़ाकाल में भगवान के मनको हरण करती थीं, लहररूपी भ्रुकुटियों से शोभित, मछली के समान चंचल कटाक्षों से युक्त, कामी पुरुषों के मनोहर आलापों के समान मस्त, भौंरे और हंसों के शब्दों से रम्य, विकसित कमलों की परागरूपी अंगराग को धारण करने वाली सरसीरूपी स्त्रियां रतिकाल में भगवान को अतिशय अनुरक्त करती थीं, एक दिन भगवान राजहंस अपनी क्रीडा से रति के विलासों को तिरस्कार करने वाली, लज्जा और भयरूपी सुन्दर आभरणों से मण्डित रानीरूपी राज हंसियों को देखते हुए राजमहल पर बैठे थे कि इतने में उनकी दृष्टि एक बादल पर जा पड़ी, जलरूपी ऊपर के वस्त्र के गल जाने से दिशारूपी स्त्री की नगी, कडी, बड़ी २ और मोटी मोटी छातियों के समान इस मेघ को देखकर भगवान को परम आनन्द होरहा था, इतने में एक हवा का झोका उस बादल को उड़ा लेगया जिससे भगवान को संसार से वैराग्य आगया।

दीक्षा लेनेके बाद भगवान आहारके वास्ते कुशाग्रपुर आये और वहां वृषभदत्त ने उन्हें आहार दिया, उस दिन भगवान को दान देने की अतिशय से वृषभदत्त के यहां का भोजन अपरिमित होगया और उसने उस ही से एक हज़ार मुनियों को आहार कराया और अन्य लोगों ने भी खाया तब भी न निमटा और आकाश में पचाश्चर्य हुए, भगवान के गर्भ, जन्म, तप और ज्ञान यह चारों कल्याणक कुशाग्रपुर में हुए निर्वाण सम्मेदशिखर पर हुआ।

समीक्षा ॥

(१) शोक और महाशोक की बात है कि ग्रन्थकार को कामरस के वर्णन का यहां तक शौक हुआ कि श्रीतीर्थंकर भगवान की दीक्षा के वर्णन में भी शृङ्गाररस का ही रंग बांध दिया, देखो इस कथा में तप कल्याणक का कथन शुरू करने से पहिले ही अव्वल तो शरदऋतु का वर्णन किया है और इस शरदऋतु अर्थात् जाड़े की मौसम को एक सुन्दर स्त्री का रूप देकर उसके अनेक अंग उपांगों को बड़े चाव से दिखाया है फिर नदियों को भी स्त्रियों का ही रूप देकर और उनके भी अनेक अंग उपांगों को बडी खूबसूरती के साथ दिखाकर लिखा है कि वह उस समय भगवान के मन को हरण कर रही थीं, फिर सरसी अर्थात् तालाबों को भी सुन्दर स्त्री ही बनाकर और उनके भी आंख भौं आदि की खूबसूरती का वर्णन करके उनकी बाबत तो यहां तक रूपक बांधा है कि वह रतिकाल में भगवान को बहुत अनुरागी बना रही थीं, फिर भगवान को वैराग्य उत्पन्न होने का कारण बताते हुए भी कामरस का ही

रूपक बांधा गया है और लिखा गया है कि एक समय भगवान अपनी ऐसी सुन्दर रानियों के साथ महल की छत पर बैठे थे जो अपनी क्रीड़ा से रति के विलासों को भी तिरस्कार करने वाली थीं, उस समय भगवान की निगाह आकाश के एक बादल पर जा पड़ी जिसके उड़ जाने से भगवान को वैराग्य आगया।

इस कथा के पढ़ने से तो यह ही मालूम होता है कि यद्यपि ग्रन्थकार प्रसंग-वश भगवान के वैराग्य का कारण वर्णन कर रहा था परन्तु असल में उसको शृङ्गार रस का ही कथन करना ही अभीष्ट था और यह ही उसका उद्देश्य था, क्योंकि जिन बादलों के देखने से भगवान को वैराग्य आया उनको भी ग्रन्थकार ने दिशारूपी स्त्रियों की छातियां ही बताया है और लिखा है कि दिशारूपी स्त्री की वह छातियां कड़ी-कड़ी, बड़ी बड़ी और मोटी मोटी थीं और जलरूपी ऊपरी वस्त्र के गल जाने से नंगी होगई थीं दिशारूपी स्त्रियों की उन छातियों को अर्थात् बादलों को देख-कर भगवान को परम आनन्द होरहा था कि हवा के झोंके से वह बादल उड़ गये और भगवान को वैराग्य होगया।

पाठकगण! विचार करें कि इस कथन के पढ़ने सुनने वालों पर कामरस का प्रभाव पड़ैगा या वैराग्य का, अनेक उपदेशी ग्रन्थों में तो यह ही देखने में आता है कि रागरस में तो यह जीव अनादिकाल से अपने आप ही पगा हुआ है, कामरस से तो यह पहिले ही अन्धा होरहा है तब कामरस की कविता करके इसकी आंखों में ऐसी धूल झोंकना जिससे इसकी ज्ञान की आंखें किसी तरह भी न खुल सकें इसका बहुत ही अनिष्ट करना है और यदि कोई कामरस की ही पुस्तक लिखे तो शायद जीवों का इतना अनिष्ट न भी हो जितना धर्म ग्रन्थों में कामरस के भर देनेसे होता है क्योंकि धर्म ग्रन्थों के प्रत्येक वाक्य को तो भोले लोग बड़ी श्रद्धा से पढ़ते हैं और उसको अपने कल्याण का कारण समझते हैं, इस वास्ते धर्म ग्रन्थों के द्वारा कामरस को पिलाना मिठाई में विष मिलाकर खिलाने के समान है और कामरस के वर्णन की भी तो कोई हद होनी चाहिये, यहां तो श्रीतीर्थंकर भगवान के ही वैराग्य का कारण-वर्णन करने में भी कामरस की ही वेहद भरमार कर दी गई है अर्थात् इस बात की भारी कोशिश की गई है कि कथा के पढ़ने सुनने वाले कामरस में ऐसे बेहोश हो-जावें कि वैराग्य कथन का तो उन पर कुछ भी असर न होने पावे, जैनधर्म के सच्चे प्रेमियो बचो ऐसे कथनों के पढ़ने सुनने से और बचाओ अपने भाइयों को बांह पकड़ कर, इससे तुमको बड़ा भारी पुण्य होगा और जीवों के कल्याण का मार्ग साफ़ हो-कर सारी दुनियां में जैनधर्म का डङ्का बजेगा।

(२) भगवान के आहार लेने से वृषभदत्त के घर का थोड़ा सा आहार इतना ज्यादा बढ़ गया कि एक हजार मुनियों के आहार लेने और अन्य बहुत से पुरुषों के जीम लेनेपर भी वह न निमटा इस ही प्रकार के अनेक अतिशय सब ही धर्मवाले अपने २ देवताओंके विषय में वर्णन करते हैं, जैसा कि ईसामसीह का मुर्दोंको जिन्दा कर देना, आप सूलीपर मारा जाकर कई दिन पीछे कबरमें जिन्दा निकल आना मुहम्मद साहब का चांदके दो टुकड़े कर देना, इस ही प्रकार ब्रह्मा विष्णु महेश के विषय में भी अनेक प्रकार के अतिशय वर्णन किये जाते हैं परन्तु इन अतिशयों के वर्णन से सुनने वालों के हृदय पर कोई भी प्रभाव नहीं पड़ता है, यदि इन अतिशय कथनों से ही धर्म का प्रभाव जमा करता तो जो कोई सब से ज्यादा गप्प मारनी जानता वह ही बाजी जीत ले जाता, परन्तु ऐसा नहीं होता है बल्कि प्रत्येक मत वाले दूसरे मत वालों के इन अतिशय कथनों को प्रकृति के विरुद्ध सिद्ध करके ही उस मत की असत्यता को सिद्ध करने में सफल मनोरथ होते हैं जैसा कि धर्मपरीक्षा और धूर्ताख्यान आदि ग्रन्थों के द्वारा जैनी लोग हिन्दूधर्म का मखौल हिन्दू धर्म के अतिशय कथनों के ही द्वारा उड़ा सके हैं सच तो यह है कि अपने अतिशय कथनों के ही कारण सब धर्म वाले अपने धर्म को वस्तु स्वभाव के अनुकूल सिद्ध करने में असमर्थ हो-जाते हैं अर्थात् इस प्रकार के अतिशय कथन सत्य धर्म की जड़ को खोखली कर देने वाले होते हैं।

(३) वृषभदत्त के यहां का खाना जो इतना अधिक बढ़ गया था कि हजारों आदमियों की उदर पूर्त्ति होने पर भी समाप्त न हुआ तो क्या किसी देवी देवता ने उस खाने को इतना बढ़ा दिया था या वह खाना ही अपनी पुद्गल प्रकृति को छोड़कर कोई ऐसा सातवां द्रव्य होगया था जिसका नाम और गुण किसी भी ग्रन्थ में वर्णन नहीं किया गया है, यदि किसी देवी देवता ने उस खाने को बढ़ा दिया था तो क्या उन्होंने अपनी विक्रया ऋद्धी से बढ़ाया था या वास्तव में सचमुच का ही खाना कहीं से उठा लाकर वहां रख दिया था या ला लाकर रखते रहे थे, अगर विक्रया ऋद्धी से ही वह खाना बढ़ाया गया था तो खाने वालों का पेट उस खाने से कैसे भर गया और अगर भरा नहीं था बल्कि भरा हुआ सा मालूम होता था तो बेचारे हजारों मुनि जिन्होंने उसके यहां आहार लिया वास्तव में भूखे ही रहे होंगे और इसका पाप उन्हीं देवी देवताओं पर हुआ होगा जिन्होंने आकर इस खाने को बढ़ाया परन्तु उन्होंने क्यों ऐसे महान् पाप का कार्य किया इसकी कोई वजह मालूम नहीं होती, और अगर वह देवी देवता कहीं से उठा उठा कर खाना लाये थे तो वह लाते

हुए क्यों नहीं नज़र आते थे, कम से कम खाना तो आता हुआ अवश्य ही दिखाई देना चाहिये था, इसके अलावा वह खाना कहां से लाते थे और जहां से लाते थे उसकी आज्ञा से लाते थे या ज़बरदस्ती या आंख मिचाई देकर और जिसके यहां से खाना लाते थे उसको मूल्य भी देते थे या नहीं, यह खाना एक हज़ार मुनियों ने खाया था इस वास्ते इन सब बातों की पूरी २ जांच की ज़रूरत है क्योंकि ऐसा न हो उनको अयोग्य भोजन करना पड़ा हो।

अगर देवी देवताओं का यह काम नहीं था तो खाना किस तरह बढ़ गया, किस वस्तु के परमाणु खानारूप होगये और वह किस कारण होगये और किस विधि होगये, गरज़ खाना बढ़ाने की यह बात किसी तरह भी वस्तु सभाव के अनुसार नहीं बैठती है और जैनधर्म को बट्टा लगाती है।

(८) अगर खाना बढ़ाने की यह बात सत्य मान ली जावे तब तो दुनियां में कोई भी बात असम्भव नहीं हो सकती है और सम्भव असम्भव के माने बिदून कोई भी कथन सत्य वा असत्य नहीं कहा जा सकता है, अर्थात् फिर तो किसी भी धर्मके किसी भी कथनपर कोई भी आक्षेप नहीं किया जा सकता है, फल जिसका यह होता है कि सत्य और झूठ की परीक्षा का मार्ग ही बिल्कुल बन्द होजाता है और वस्तु सभाव स्थिर न होने से संसार के किसी भी कार्य में नहीं लगा जा सकता है इस वास्ते इस प्रकार के अतिशय कथन बहुत ही हानिकारक हैं और वस्तु सभावरूप जैनधर्म को तो बहुत ही कलङ्क लगाने वाले हैं।

राजा दक्ष की कथा।

श्रीमुनि सुव्रतनाथ भगवान का पोता राजा दक्ष हुआ है जिसकी कन्याका नाम मनोहरी था, यह कन्या बहुत ही सुन्दर थी, जवान होने पर इस कन्या की दोनों छातियें मोटी मोटी, जङ्घा बड़ी और कमर पतली होगई, उसका रूप तलवार की धार के समान ऐसा तीक्ष्ण था कि धीर वीर मनुष्यों के मन को भी घायल कर देता था, औरों की तो बात ही क्या है स्वय उसके पिता दक्ष का मन भी उसके रूप पर डगमगा गया और कामदेव ने उसको भी मनोहरीरूपी हथियार से वश में कर लिया, यहां तक कि राजा ने छल के साथ अपने दर्बार के सभासदों से भी अपनी बेटी को भोगने की सम्मति ले ली और अपनी बेटी को ग्रहण कर ली, कन्या की माता राजा के इस खोटे आचरण से नाराज होकर अपने पुत्र के साथ दूसरे देश को चली गई।

समीक्षा।

(१) यह कभी विश्वास नहीं किया जा सकता है कि सतयुग में भी ऐसे ऐसे भयानक पाप होते हों कि कन्या का पिता स्वयं ही अपनी पुत्री पर आशक्त होजावे और उसको ग्रहण करले, ऐसी ऐसी दुर्घटनाओं का सम्बन्ध सतयुग से जोड़ना वास्तव में सतयुग को कलङ्कित करना और कथा पढने सुनने वालों के हृदय से महापापों की घृणा को हटाना है।

(२) बडा भारी शोक तो इस बात का है कि यह कथा किसी नीच शूद्र पुरुष की नहीं बनाई जाती है बल्कि यह कथा एक क्षत्री राजा की कही जाती है जा मुनिधर्म ग्रहण करने का परम अधिकारी और मोक्ष जाने का परमपात्र समझा जाता है और इस कथा में तो यहा तक गजब किया गया है कि यह महादुष्कृत्य खास श्रीतीर्थंकर भगवान के सगे पोते का बताया जाता है जिससे पढ़ने सुनने वालों पर बहुत ही बुरा प्रभाव पड़ता है, यदि वास्तव में भी ऐसी दुर्घटना हुई थी तो इस धर्म ग्रन्थ में नहीं लिखी जानी चाहिये थी, हरिवंश के और भी तो अनेक राजाओं की कथा इस ग्रन्थ में नहीं लिखी गई है।

राजा वसु की कथा।

इस ही हरिवंशमें एक राजा वसु हुआ, यह वसु क्षीरकदम्ब नामके एक ब्राह्मण से विद्या पढ़ा था और उस ही के साथ क्षीरकदम्ब का बेटा पर्वत और नारद नाम का एक और विद्यार्थी भी पढ़ता था।

क्षीरकदम्ब तो एक दिगम्बर मुनि का शिष्य होगया और नारद अणुव्रती श्रावक होगया परन्तु पर्वत को दिगम्बर मुनि से अति द्वेष रहा और उसने उनके पास जाना भी पसन्द न किया, वसु राजा बडा सत्यवादी था इस कारण उसके धर्मात्मा होने की धूम चारों तरफ फैली हुई थी।

पर्वत वेद का उपदेश दिया करता था एक दिन नारद के सामने भी उसने यह उपदेश दिया कि वेदों में बकरी का बच्चा यज्ञ में होम करना लिखा है, नारद ने कहा कि वेद वाक्य का ऐसा अर्थ नहीं है, इसपर उन दोनों में विवाद होगया और राजा वसु के दर्बार में दोनों का शास्त्रार्थ होना ठहरा, रात्रि को पर्वत की माता राजा के घर गई और गुरानी होने का दबाव डालकर उससे यह वचन ले लिया कि यद्यपि पर्वत का बताया हुआ अर्थ झूठा है तो भी सभा में पर्वत को ही जिताया जावेगा।

शास्त्रार्थ होने पर राजाने ऐसा ही किया और पर्वत को ही जिताया, उस ही दम राजा का सिंहासन नीचे भूमि में धस गया और पाताल में जाकर गिरा और

राजा वसु मरकर सातवें नरक गया, यह देखकर लोगों ने पर्वत को धिक्कारकर नगर से बाहर निकाल दिया और नारद की बहुत पूजा करी।

परन्तु इधर उधर घूमते हुए पर्वत को एक असुर मिल गया जिसकी सहायता से पर्वत ने लोक में हिंसा यज्ञ का प्रचार किया, उस असुर की कथा इस प्रकार है कि एक समय एक राजा अयोधन ने अपनी पुत्री सुलसा का स्वयम्बर किया, अपनी माता की आज्ञानुसार सुलसा ने राजा मधुपिंगल के गले में वरमाला डालने का निश्चय कर रक्खा था, राजा सगर को सुलसा के व्याहने की अति लालसा थी और मधुपिंगल की आंखें पीली थीं, राजा सगर ने एक झूठा सामुद्रिक शास्त्र बनवाया और उसमें पीली आंख वाले की बहुत निन्दा लिखवाई और उस शास्त्र को प्राचीन सिद्ध करने के लिये जमीन में गड़वा कर बहुत दिनों पीछे निकलवाया और स्वयम्बर के समय सभा में पढवाया, राजा मधुपिङ्गल ने इस शास्त्र को सुनकर अपने को अयोग्य समझ लिया और दिगम्बर मुनि होगया और लाचार सुलसा ने राजा सगर के गलेमें वनमाला डाली,पीछेसे मुनि अवस्थामें मधुपिङ्गल को मालूम हुआ कि उसके साथ धोका किया गया था इस कारण उसको इतना ज्यादा क्रोध आया कि उसके प्राण निकल गये और मर कर व्यन्तर हुआ यह ही वह व्यन्तर है जिसने पर्वत के साथ मिलकर हिंसाकारी यज्ञ चलाया, व्यन्तर होकर इसका नाम महाकाल हुआ, राजा सगर से बदला लेने के वास्ते यह महाकाल सगर की राजधानी की तरफ़ जा रहा था कि रास्ते में इसको पर्वत मिल गया, महाकाल ने पर्वत के गुरु क्षीरकदम्ब के गुरुभाई शांडिल्य का रूप धारण करके पर्वत से कहा कि नारद से हार कर तू निराश मत हो, हम तुम दोनों मिलकर हिंसामयी यज्ञ का प्रचार करेंगे, फिर उस महाकाल ने हिन्दुस्तान भर में सैकड़ों बीमारियां फैलाकर राजा और प्रजा को बहुत आकुलित कर दिया और पर्वत के द्वारा नाना प्रकार के शांति कर्म और यज्ञ कराने प्रारम्भ कर दिये जिससे वह बीमारियां शांत होने लगीं, इस वास्ते लोगों का इन पर बहुत विश्वास बढ़ने लगा, राजा सगर भी इनके पास आया और पर्वतने उसको भी अपने मंत्रोंसे निरोग कर दिया, महाकाल ने ऐसे अनेक वेद बनाये जिसमें हिंसामयी यज्ञों का विधान था और वह वेद ब्राह्मणों को पढ़ाये और संसारी लोगों को सर्वप्रकार की कार्य सिद्धि के वास्ते अश्वमेध, अजमेध और गोमेध यज्ञ करने बतलाये और अपनी माया से उनका साक्षात् फल भी दिखला दिया, जब इस बात पर लोगोंको अधिक विश्वास होगया तब ऐसा राजसू यज्ञ चलाया जिसमें हजारों राजा होम किये जाते थे, नारद ने आकर उसकी बात को रद्द करना चाहा परन्तु शक्ति-

शाली व्यन्तरके सामने उसकी कुछ भी न चल सकी, आखिर उसने राजा सगर और उसकी रानी सुलसा को भी यज्ञ में होम कराया और अपने को परम सुखी मान चला गया और पर्वत समस्त पृथिवी पर इन हिंसामयी वेदोंका प्रचार करता रहा।

समीक्षा।

(१) हरिवंशपुराण में तो इस राजावसु के पिता का नाम अभिचन्द्र और माता का नाम वसुमती बताया है परन्तु पद्मपुराण में इसके पिता का नाम ययाति और माता का नाम सुरकान्ता लिखा है।

(२) ग्रन्थ में यह बात स्पष्ट खोल देने की आवश्यकता थी कि क्षीरकदम्ब जैनी था वा मिथ्यात्वी और वह द्वादशांगवाणी पढ़ाया करता था वा हिन्दुओंके वेद, क्योंकि इस ही हरिवंशपुराण में आगे चलकर लिखा है कि वेद दो प्रकार के हैं एक आर्ष और दूसरे अनार्ष, श्रीतीर्थंकर भगवान कथित द्वादशाङ्गवाणी तो आर्षवेद हैं और मनुष्य कृत ग्रन्थ अर्थात् पर्वत और महाकाल के बनाये हुए वेद अनार्षवेद हैं, हरिवंशपुराण के इस कथन से तो साफ तौर पर यह ही सिद्ध होता है कि महाकाल से पहिले मनुष्यों के बनाये हुए अनार्षवेद थे ही नहीं इस कारण क्षीरकदम्ब ने जो वेद पढ़ाये थे वह द्वादशाङ्गवाणी ही होगी और उस ही में "अजैर्यष्टव्यं" लिखा होगा।

(३) परन्तु स्वयम् हरिवंशपुराण से ही यह विचार असत्य सिद्ध होता है, क्योंकि उस में लिखा है कि—

(क) क्षीरकदम्ब अपने शिष्योंको आरण्यक वेद पढ़ा रहा था, यह आरण्यक वेद हिन्दू वेदों के ही अङ्ग हैं और द्वादशाङ्गवाणी नहीं हैं।

(ख) राजा वसु के दर्बार में जब नारद और पर्वतकी बहस होने को थी उस समय ज्ञान और वय में वृद्ध लोगों ने राजा से कहा था कि नारद और पर्वत का संवाद किसी वैदिक विषय पर है उसका निर्णय आप के सिवाय और कोई दूसरा नहीं कर सकता है, क्योंकि इस समय पृथिवी पर वेदों की सम्प्रदाय का नाश सरीखा होगया है, आज की सभा में जो बात तर्क वितर्क से निश्चित होजायगी वेद मार्गियों की उसी पर असंदिग्धरूप से प्रवृत्ति होगी।

(ग) सभा में जो बहुत से तपस्वी आये थे उनके दाढ़ी और जटा थीं उस समय बहुत से ब्राह्मण तो सामवेद का पाठ कर रहे थे, बहुत से मंत्रों का जोर जोर से उच्चारण कर रहे थे बहुत से यजुर्वेद का पाठ कर रहे थे, बहुत से पदक्रम से

मंत्र बोलते थे, साम और यजुर्वेद के पाठों में दत्त चित्त ब्राह्मणों ने उस समय राजा का आंगन गुंजार रखा था ।

(४) इस ही हरिवंशपुराण में यह भी लिखा है कि यह नारद इस शास्त्रार्थ से पहिले ही एक दिगम्बर मुनि के पास अनुव्रती श्रावक होगया था, ऐसी दशा में उसको अन्यमत के वेदों के अर्थ पर शास्त्रार्थ करने का क्या अधिकार था और यह कैसे हो सकता था कि वेदानुयायी सर्व विद्वान् यह मान लेते कि इनके विवादसे जो अर्थ सिद्ध होगा वह सब ही को स्वीकार होगा ।

(५) यह कथा बीसवें तीर्थंकर श्रीमुनि सुव्रतनाथ के बाद की है परन्तु आदिपुराण के अनुसार प्रथम तीर्थंकर के ही समय में हिंसा का उपदेश देनेवाले वेद और धर्म के अर्थ पशुघात करने वाले ब्राह्मण मौजूद थे चुनांचि भरत महाराज अपने दर्बार में आये हुए राजाओं को मिथ्यात्वी ब्राह्मणों से बचने के वास्ते कहते हैं कि जो वेदों के द्वारा आजीविका करते हैं वह अक्षर म्लेक्ष हैं, ये ब्राह्मण हिंसा करने और मांस खाने आदि को पुष्ट करने वाले वेद शास्त्र के अर्थ को बहुत मानते हैं, इस ही प्रकार भरत महाराज ने अपने बनाये हुए ब्राह्मणों को उपदेश देते हुए मिथ्यात्वी ब्राह्मणों की बहुत निन्दा की है और कहा है कि वह हिंसामय धर्म को मानकर पशुओं का घात करते हैं और पाप शास्त्रों से आजीविका करते हैं, निर्दय होकर पशुओं को मारते हैं, पशुओं की हिंसा करने के कारण वह राक्षसों से भी अधिक निर्दय हैं, इस प्रकार आदिपुराण के अनुसार जब श्रीआदिनाथ के समय में ही हिंसामय वेद और हिंसक ब्राह्मण मौजूद थे तब हरिवंशपुराण की यह कथा सर्वथा ही असत्य होजाती है ।

(६) यदि राजा वसु के पहिले से यज्ञ में पशु होम करने की प्रवृत्ति न होती और अहिंसा धर्म का यहां तक प्रचार होता कि जो व धान भी ऐसे ही होम किये जाते जिनमें उगने की शक्ति न रहे जैसा कि हरिवंशपुराण में लिखा है तब यह असम्भव बात है कि उस समय के सब विद्वान् लोग नारद और पर्वत की इस बहस को ऐसी साधारण मान लेते कि जो कुछ आज निर्णय हो जावेगा वह ही सब को स्वीकार होगा अर्थात् यदि यह बात निश्चय होगी कि पशु होमने चाहिये तो ऐसा ही करने लगेंगे इस से सिद्ध है कि यह कहानी बनावटी है और ऐसे समय में गढ़ी गई है जब कि यज्ञ में पशु होम किये जाते थे इस ही कारण इसका ढांचा ठीक नहीं बैठ सका है ।

(७) राजा का सिंहासन किस शक्ति ने धरती में धसा दिया यह बात ग्रन्थ में जरूर बतानी चाहिये थी और यह भी लिखना चाहिये था कि उस शक्ति ने पर्वत

को क्यों पाताल में नहीं पहुंचाया और यज्ञ में पशु होमने का प्रचार करने दिया, इस बात का कोई विशेष कारण बताये बिदून तो यह कथा बिल्कुल ही बनावटी रह जाती है ।

(८) यदि यह कहा जावे कि महाकाल असुर उस शक्ति से प्रबल था जिसने राजा वसु का सिंहासन धरती में धसाया था तो यह महाकाल तो पर्वत को पीछे ही मिला है, राजा वसु को पाताल पहुंचाते समय पर्वत को छोड़ देने का तो कोई भी कारण नहीं मालूम होता है

(९) यदि महाकाल को सचमुच ही इतनी शक्ति होती कि वह सारे भारतवर्ष में बीमारी फैला दे और जिस समय चाहे उसको अच्छा कर दे तो उसको पर्वत से मिलने और इतना झगड़ा बांधने की कोई भी जरूरत नहीं थी क्योंकि उसका अभिप्राय तो राजा सगर को दुख देने का था सो वह अनेक रीति से उसको दुख दे सकता था इससे भी यह कहानी बिल्कुल ही बेजोड़ होगई है ।

(१०) इस कहानी के पढ़ने सुनने वालों पर व्यन्तरों की शक्ति का बड़ा भारी प्रभाव पड़ता है और व्यन्तर पूजा की उत्तेजना होती है इस कारण यह कहानी बहुत हानिकारक है ।

(११) इस कहानी से एक बड़ी भारी बात यह निकलती है कि सतयुग में भी झूठे शास्त्र बनते थे और उनको धरती में गाड़ने आदि के द्वारा प्राचीन सिद्ध करके लोगों को ठगा जाता था तब इस निकृष्ट पंचमकाल में तो जो न हो वह थोड़ा है अर्थात् अब तो लोगोंने बहुत ही झूठे शास्त्र बना बनाकर और उनको प्राचीन सिद्ध कर करके लोगों को ठगा होगा, इस कारण बिना पूरी जांच पड़ताल और परीक्षा के केवल प्राचीनपने से ही किसी शास्त्र को सच नहीं मान लेना चाहिये ।

वसुदेव की कथा ।

हरिवंश में यदु नाम का एक महा प्रतापी राजा हुआ है जिस से यादववंश चला है, श्रीकृष्ण के पिता वसुदेव भी यादववंश में ही हुए हैं, पूर्व भव में वह दिगम्बर मुनि थे जिनको तप के प्रभाव से अनेक ऋद्धियां प्राप्त होगई थीं, इन्द्र ने भी स्वर्ग में इनके तप, ऋद्धि और वैय्यावृत्ति की प्रशंसा की थी, जिस पर एक देव परीक्षा करने को भी आया और सब कुछ सच पाया, यह अवश्य ही तीर्थंकर होते परन्तु मरते समय इन्होंने यह निदान किया कि अगले जन्म में मैं लक्ष्मीवान अतिसुन्दर बनूं, इस कारण वह मरकर अति सुन्दर राजपुत्र वसुदेव हुआ ।

वसुदेव इतना सुन्दर था कि जवान होने पर जब वह महल से बाहर आता तो नगर की स्त्रियां उसका रूप देखने को बड़ी आकुलता मचातीं और सब काम छोड़कर उसके देखने को दौड़ पड़तीं, जब नगर के लोग अपनी स्त्रियों की इस बातसे लाचार होगए और इसका कोई भी प्रबन्ध न कर सके तो उन्होंने राजा से प्रार्थना करी और कहा कि यद्यपि वसुदेव के शील में हमको कुछ भी सन्देह नहीं है परन्तु हमारी स्त्रियां उसके देखने को यहां तक बेचैन होती हैं कि बच्चों को दूध पिलाती हुई भी बच्चे को छोड़कर भाग उठती हैं और किसी तरह भी रोके नहीं रुकतीं, इस कारण अब इसका उपाय इसके सिवाय और कुछ नहीं है कि वसुदेव का ही महल से बाहर निकालना बन्द किया जावे; उस समय वसुदेव का बड़ा भाई नगर का राजा था, उसने नगर वासियों की इस प्रार्थना को स्वीकार किया और वसुदेवका बाहर निकलना एक बहाने के साथ बन्द कर दिया।

एक दिन महल की दासी रानी के वास्ते उबटना ले जारही थी, वसुदेव ने वह उबटना उससे छीन लिया, दासी ने इसपर बड़ा रोस किया और कहा कि ऐसी ही बातों के कारण तो तुम महल के अन्दर बन्द किये गये हो, इसपर वसुदेव को अपने बाहर निकलने की बन्दी का हाल मालूम हुआ और वह वहां से भाग निकला और ब्राह्मण का वेश बनाकर परदेश चला गया।

एक गांव में एक गन्धर्वाचार्य रहता था जिसकी सोमा और विजयसेना नाम की दो कन्याएं सुन्दरता में अनुपम थीं, वह दोनों चन्द्रवदनी उत्तमरूप की अन्तिम सीमा को पहुंची हुई थीं और गन्धर्वविद्या में बहुत होशियार थीं, उनके पिता का यह ही सङ्कल्प था कि जो कोई इनको गन्धर्वविद्या में जीत लेगा वह ही इनका पति होगा, वसुदेव चलता २ उस ही गांव में पहुंच गया और उसने उन दोनों कन्याओं को गन्धर्वविद्या में हरा दिया जिससे उन दोनों कन्याओं से उसका विवाह होगया और वह वहीं रहकर उनके साथ रमनक्रीड़ा करने लगा, इस प्रकार रमण करने के कुछ दिन पीछे एक स्त्री से अक्रूर नाम का पुत्र हुआ, वसुदेव वहां कुछ दिन और रहे फिर एक दिन बिना कहे ही वहां से भी चल दिये।

चलते चलते वह एक सरोवर पर पहुंचा और एक मस्त हाथी को वश किया जिसपर वहां के विद्याधर राजा ने श्यामा नाम की अपनी पुत्री उसको विवाह दी, वसुदेव वहीं ठहर गया और श्यामा से रमणक्रीड़ा करता रहा, एक दिन रात को अधिक भोग करने से थक कर वह गहरी नींद में सोगये, इतने में श्यामा के बाप का बैरी अंगारक जो श्यामा के बापसे राज्य छीनकर आप राजा बना हुआ था वहां आ-

कुशा और वसुदेव को श्यामा की भुजासे अलग करके आकाश में उडा ले गया, जब श्यामा की आंख खुली तो वह तलवार लेकर आकाश में उडी और अंगारक से जा-लड़ी, खूब लडाई हुई, अंगारक ने लाचार होकर वसुदेव को नीचे छोड दिया, श्यामा ने नीचे एक दासी खड़ी कर रक्खी थी जिसने वसुदेव को अधर में ही दबोच लिया और घरकी तरफ़ ले चली, वहांसे एक आवाज आई कि वसुदेवको यहां छोड जाओ इसको यहां बहुत लाभ होने वाला है, दासी ने उसको वहीं छोड़ दिया जिससे वह एक सरोवर में जाकर उतरा।

सरोवर में से निकलकर वसुदेव चम्पापुर नगरमें गया, वहां सेठ चारुदत्त के यहां एक गन्धर्वसेना नाम की कन्या थी जो गाने बजाने में बहुत प्रवीण थी, उसका प्रण था कि जो कोई मुझको गन्धर्वविद्या में जीत लेगा वह ही मेरा पति होगा, इस कारण उस समय अनेक देशों से वीणा बजाने वाले ब्राह्मण, क्षत्री और वैश्य वहां आए हुए थे क्योंकि वह ऐसी सुन्दरी थी कि सारा ही जगत उसपर मोहित होरहा था, वसुदेव ने वीणा बजाने में उसको जीतकर उससे विवाह किया और उस ही समय उस नगर के गन्धर्वचार्यों ने भी अपनी दो कन्याएं वसुदेव को व्याह दीं।

वसुदेव ने उनके साथ मन माना भोग किया, जब वसुदेव को यह मालूम हुआ कि यह गन्धर्वसेना सेठ की बेटी नहीं है किन्तु किसी विद्याधर की बेटी है तब उसने सेठ से उसकी सब कथा पूछी और सेठ ने वह कथा इस प्रकार सुनाई।

मैं एक धनाढ्य वैश्य का पुत्र हूं. जब चिरकाल तक काम भोग करते हुए भी मेरे माता पिता को कोई सन्तान न हुई तो वह बहुत सोच में रहने लगे, एक दिन वह दोनों मन्दिर में जिनेन्द्रदेव की पूजा कर रहे थे कि वहां एक मुनिराज आगए, मेरे माता पिता ने वहीं उनसे पूछा कि हमारे कोई पुत्र होगा या नहीं, मुनिराज ने कहा कि जल्दी ही तुम्हारे एक अति उत्तम पुत्र होगा, फिर मैं उत्पन्न हुआ, मुझे अणुव्रतों की दीक्षा दी गई और विद्या पढाई गई।

बड़ा होने पर एक दिन मैं अपने मित्रों के साथ सैर करता हुआ एक नदी पर गया, वहां हमको स्त्री पुरुष के पैर के निशान दिखाई दिये, पैरों के उन निशानों को देखते २ हम अगाडी बढ़े तो हमको केलों के थम्बों से बने हुए एक घर में कामभोग की एक सेज नज़र पड़ी, कामभोग करने की वजहसे उस सेज के फूल पत्ते दलेमले हुए थे, यह देखकर हमारा कौतूहल और भी बढा, हम वन में और आगे बढ़े तो एक वृक्ष पर एक विद्याधर लटक रहा था, किसी दुष्ट ने उसे लोहे की कीलों से कील रक्खा था और उसका शरीर तलवारों की नोकों से लहूलुहान होरहा था, वहीं एक

ढाल के नीचे तीन दिव्य औषधियां रक्खी हुई थीं, विद्याधर ने इशारे से मुझे वह औषधियां बताईं, जिनको लगाने से वह वहांसे छूट गया और उसके घाव भी अच्छे होगये, अच्छा होते ही वह ढाल तलवार लेकर दौड़ गया, एक वैरी उसकी स्त्री को हर लेगया था उससे युद्ध करके वह अपनी स्त्री को छुड़ा लाया।

विद्याधर ने कहा कि मैं एक राजा का बेटा हूं, मैं अपने मित्र के साथ सैर के वास्ते गया था, वहां मैंने एक तपस्वी की कन्या देखी जिसने मेरे मन को हर लिया और मैं उस पर मुग्ध होगया, घर आने पर मेरे पिता को यह बात मालूम होने पर उसने तपस्वी को बुलाकर वह कन्या मेरे साथ व्याह दी, मेरा मित्र धूमसिंह भी उस कन्या पर मोहित होगया था, इस कारण मुझे अपनी स्त्री के साथ मौज करता हुआ देख वह जला करता था, आज मैं इस नदी के किनारे अपनी स्त्री से कामभोग कर रहा था कि अचानक वह धूमसिंह यहां आ पहुंचा और मुझे वृक्ष के ऊपर कील कर मेरी स्त्री को ले उड़ा, अब जब तुम्हारी कृपा से मेरे बन्धन छूटे तो मैं अपनी स्त्री को छुड़ा सका।

फिर चारुदत्त सेठ कहने लगा कि हमारे नगर में एक बहुत ही सुन्दर वेश्या रहती थी एक जगह उसका नृत्य हुआ जिसमें मैं भी गया; वह वेश्या मुझ पर आशक्ति होगई और घर जाकर अपनी मां से कहने लगी कि चारुदत्त के सिवाय मैं और किसी से भी सम्भोग नहीं करूंगी इस वास्ते तू उसे मुझे जल्दी मिला दे, मेरा चाचा रुद्रदत्त बड़ा व्यसनी था, वेश्या की माता ने यह काम उसके सपुर्द किया और वह मुझ को एक बहाने से वेश्या के घर लेगया, वहां उस वेश्या से मेरा अनुराग होगया और विषयों में ऐसा आशक्त होगया कि बारह वर्ष तक उस वेश्या के ही घर रहा और अपने घरबार को बिलकुल भूल गया, मेरा पिता सोलह करोड़ का मालिक था, धीरे २ यह सब धन वेश्या के यहां पहुंच गया, फिर जब मेरी स्त्री का गहना भी आने लगा तो वेश्या की माता ने उस वेश्या को समझाया कि अब इसको धतकार बता और किसी दूसरे व्यसनी को ढूंढ परन्तु उस वेश्या ने नहीं माना, तब उस वेश्या की माता ने रातको सोते हुए मुझे अपने घरसे निकलवा दिया और मैं अपने घर पहुंचा।

मैं अपनी स्त्री का जेवर लेकर व्यापार के वास्ते अपने चचा के साथ परदेश को गया, एक द्वीप में मुझ को वह ही विद्याधर मिला जिसको मैं ने वृक्ष पर से छुड़ाया था, अब वह मुनि होगया था और उसका पुत्र उसके देश में राज्य करता था और यह गन्धर्वसेना उसकी पुत्री भी अपने भाई के पास रहती थी, अचानक उस समय इस विद्याधर मुनिराज का पुत्र भी वही उस द्वीप में आ गया, मुनिराज ने उससे मेरी

भेंट कराई, उसने मुझ से कहा कि गन्धर्वसेना के विषय में एक मुनिराज ने ऐसा बताया था कि चारुदत्त सेठ के यहां एक यदुवंशी आकर इसको गन्धर्वविद्या में जीत लेगा और वह ही इसका पति होगा इस कारण तुम इसको अपने घर ले जाओ, उस ही समय वहां दो देव आये, जिनको पहिले जन्म में मरते समय मैं ने नवकार-मन्त्र दिया था और इस ही कारण वह देव हुए थे वह मेरे हद्दसे ज्यादा अहसानमन्द थे, वह विद्याधर राजा मुझे अपने घर ले गया और यह गन्धर्वसेना और बहुत माल दौलत मुझे देकर मेरे घर छोड़ गये और उन देवों ने भी मुझको स्वर्ग से लाकर बहुत कुछ धन दौलत दी।

यहां आकर मालूम हुआ कि वह वेश्या अपनी मा का घर छोड़कर हमारे ही घर आरही है और श्रावक के व्रत धारण करके मेरी मा और स्त्री की पूर्ण सेवा करती रही है, इसलिये परदेशसे वापिस आकर मैं उससे भी मिला और खुशी के साथ मैंने उसको भी अपनाया।

अष्टाह्निका के दिनों मे इस चम्पापुर नगरी में अनेक स्त्री पुरुष वन्दना को आये क्योंकि श्रीवासुपूज्य भगवान के पांचों कल्याणक इस ही नगरी में हुए हैं, नगर से बाहर जिस वन में भगवान की प्रतिमा विराजमान थी वहां बड़ा भारी उत्सव मनाया गया वसुदेव भी प्रियतमा गन्धर्वसेना के साथ रथ में सवार होकर पूजा करने को गया वहां मन्दिर के आगे एक कन्या नृत्य कर रही थी, वह कन्या नील कमल के पत्तों के समान श्याम थी, गोल और ऊंची उठी हुई छातियों से शोभित थी, बिजली के समान भड़कीले भूषणों से मण्डित थी, उसके होंठ लाल थे, हाथ पैर कमल जैसे थे, नेत्र सफेद कमल जैसे थीं, वह रूपवती कन्या जिनेन्द्र की भक्ति में लीन होरही थी, खूब गाना बजाना और नाच होरहा था, ज्यों ही उस नाचने वाली कन्या और वसुदेव की चार आंखे हुईं त्यों ही उन दोनों ने अपने २ रूप से एक दूसरे को बांध लिया; वसुदेव को नाचने वाली कन्या पर इस प्रकार आशक्त देख गन्धर्वसेना को बड़ा क्रोध आया और उसने अपने रथ को आगे हंकवा दिया और नगर को लौट आये, वसुदेव ने जिस समय नाचने वाली कन्या को देखने से अपनी प्रियतमा गंधर्वसेना की भौंहें चढी हुई देखीं तो उसने उसको हाथहूथ जोड़कर मना लिया जिससे वह अपने कोप को दूर करके पहिले के समान प्रेम करने लग गई, पति के हाथ जोड़ने पर तो स्त्रियां प्रसन्न हो ही जाया करती हैं।

वह कन्या जो उत्सव में नृत्य कर रही थी एक विद्याधर राजा की कन्या थी, उस कन्या की दादी वसुदेव के पास आई और कहने लगी कि वह मेरी पोती काम के

घाणों से बिल्कुल घायल होगई है न कुछ खाती है और न कुछ पीती है बल्कि तुम्हारे विरह में बिल्कुल बेहोश होरही है जिससे हमारा सारा ही कुटुम्ब दुखी होरहा है हमारी कुलविद्या ने हमको बताया है कि मस्त हाथी द्वारा नष्ट की हुई कमलिनी के समान किसी युवा पुरुषने इसके हृदय पर चोट लगाई है, हमने अच्छी तरह जान लिया है कि उस कन्या के हृदय की इस व्यथा के कारण तुम ही हो, नाम उस कन्या का नीलंयशा है, तुम मेरे साथ चलो और उसे स्वीकार करो, अपने चित्त को चुरानेवाली रमणी का यह वृत्तान्त सुनकर वसुदेव भी चलने के लिये उत्कण्ठित होगया और कहा कि तुम चलो और मेरे आने की उम्मेद दिलाकर उसको तसल्ली करो इतने में मैं भी आता हूं, बुढ़िया चली गई और सब हाल सुनाकर कन्या को धीरज बंधाया।

वसुदेव अपनी प्यारी स्त्री गंधर्वसेना के साथ आनन्द से सोरहा इतने ही में भयङ्कर मूर्त्ति धारण करने वाली एक वेताल कन्या आई और वसुदेव को जगाकर मुक्कों से मारने लगी और वन में उठा लाई वसुदेव ने देखा कि यहां तो नीलंयशा मौजूद है, वसुदेव उससे प्यार की बातें करने लगा, परन्तु वह नीलंयशा नहीं थी बल्कि उसकी दादी थी जिसने रूप बदलकर और वसुदेव को यहां उठा लाकर अपना रूप नीलंयशा जैसा बना लिया था, वह वसुदेव को हंसाने लगी और अपना असली रूप बनाकर कहने लगी कि मैं तो उसकी दादी हूं, फिर नीलंयशा को अपने पास बुलाकर वसुदेव से कहा कि तुम इस कन्या के चित्तको चुराने वाले हो, तुम्हारे विरह में यह बिलकुल मुर्झा गई है और अपनी भुजाओं से तुमसे चिपट जाना चाहती हैं, फिर उस बुड्ढीने कन्यासे कहा कि तेरे यह स्वामी हैं तू इनसे आलिङ्गन कर और हाथसे हाथ मिला, इसपर उस कन्याने वसुदेवका हाथ पकड़ लिया जिससे कि वसुदेव और वह कन्या मारे आनन्दके पसीनोंसे तरबतर होगये, शरीर के स्पर्श सुखरूपी जलसे उन दोनोंका प्रेमरूपी वृक्ष सींचा गया और उससे रोमांचों के बहाने चित्र विचित्र अंकुरे छटकने लगे, यह दोनों एक दूसरे पर परम आशक्त थे इसलिये उनका प्रथम पाणिग्रहण उसी समय होगया और व्यावहारिक विवाह पीछे होता रहा।

फिर वह सब नीलंयशा के नगर को चले गये वहां उनका विवाह होगया और जिस प्रकार कामदेव अपनी प्रियतमा रति के साथ भोग विलास करता है उस ही प्रकार वसुदेव भी कामिनी नीलयशा के साथ मनमाने भोग भोगने लगा।

वर्षाऋतु में कामभोग भोगने के लिये यह दोनों एक पर्वत पर चले गये, वहां उन्होंने बहुत काल तक रमण क्रीड़ा करी उन्होंने वहां कोमल २ फूल पत्तों से बनाई

हुई सेज पर काम भोग किया इस वास्ते उनको सम्भोगजन्य खेद कुछ भी मालूम न हुआ; बहुत देर तक काम भोग करने से उनके शरीर मारे पसीने के तर बतर होगये आखों में लाली आगई इस वास्ते वह दोनों केलों के बनाये हुए मण्डप से बाहर आगये।

एक समय नीलयशा की मां और मामा में यह वचन होगया था कि एक दूसरे की पुत्र पुत्री का आपस में विवाह कर दिया जावेगा, नीलयशा के मामाके नीलकण्ठ नाम का पुत्र हुआ परन्तु नीलयशाके पिता ने अपनी कन्या उसको नहीं ब्याही क्योंकि उसको मुनिराज से यह मालूम होगया था कि इसका पति तो वसुदेव होगा, वसुदेव के साथ नीलंयशा का विवाह होजाने पर नीलंयशा के मामा ने बहुत झगडा किया परन्तु नीलयशा के पिता ने उसको युक्ति में हराकर चुप कर दिया था; परन्तु वह नीलकण्ठ इस नीलयशा पर बहुत ज्यादा मुग्ध था जब यह दोनो कामभोग करके केलो के बनाये हुए मण्डप से बाहर निकले तो वह नीलकण्ठ मोर बनकर इनके सामने आया नीलंयशा उस मोरको पकड़े लगी, इतने में वह मोर उसको अपने कन्धे पर बिठा आकाश मे ले उडा।

वसुदेवने इधर उधर नीलयशा की खोज करी, जब कहीं नज़र न पड़ी तो वन में घूमने लगा, फिरते २ वह एक नगर मे आ निकला जहा सोमश्री नाम की ब्राह्मण की एक कन्या वेदविद्या में बहुत निपुण थी, ज्योतिषियों ने यह बता रक्खा था कि वेदों के पाठ में जो पुरुष इस कन्या को जीत लेगा वह ही इस कन्या का पति होगा, इस वास्ते उस समय उस नगर में दूर दूर देश से अनेक वेदपाठी इकट्ठे होरहे थे और सब तरफ़ वेदों की ही ध्वनी सुनाई देती थी, ब्राह्मण की वह कन्या बहुत ही सुन्दर थी, इसके जघन और छातिआं बहुत ही सुन्दर और बड़ी २ थी, कमर बहुत पतली थी, वसुदेव ने जब उस कन्या की ऐसी तारीफ़ सुनी तो वह उसके देखने के वास्ते बहुत ही उत्कण्ठित होगया।

वसुदेव ने वहां रहकर एक उपाध्याय से सारे वेद पढ़े फिर सोमश्री को वेदविद्या में जीतकर उससे विवाह किया, दोनों में खूब प्रेम हुआ वसुदेव ने एकान्त में रमणी सोमश्री की मोटी मोटी छातियों को मन माना तोड़ा मरोड़ा, बाल पकड़ कर चूंथा, जाघों को छेता पीटा, होंठ काटे परन्तु सोमश्री उस समय काम से बहुत व्याकुल थी इसलिये कामभोग के आनन्दमे वसुदेव के द्वारा दीहुई पीड़ा उसको कुछ भी मालूम न हुई, कामभोग की क्रिया में महाप्रवीण वसुदेव ने उस नगर मे जिनेंद्र की परम भक्त रमणी सोमश्रीके साथ बहुत दिनों तक मन माना भोग विलास किया।

फिर वसुदेव दूसरे गांव को चला गया वहां एक सेठ ने धनमाला नाम की अपनी कन्या उसको व्याह दी, धनमाला को साथ लेकर वसुदेव दूसरे नगर में गया और वहां के राजा को युद्ध में जीतकर कपिला नाम की उसकी कन्या से विवाह किया, वसुदेव वही ठहर गया और वहा कपिला से उसको एक पुत्र हुआ।

एक दिन वसुदेव जङ्गल में हाथी पकड़ने गया, वहां इसका वैरी नीलकंठ जो मोर बनकर नीलंयशा को हर लेगया था हाथी का रूप धारण कर वसुदेव को आकाश में उड़ा लेगया, वसुदेव ने उसको मुक्कोंकी खूब मार मारी जिससे उसने इसको आकाश मे छोड़ दिया, वसुदेव किसी अन्य देश में एक तालाब में जा गिरा और उसमें से निकल कर गांव में गया, वहा पद्मावती नाम की एक राजकन्या की यह प्रतिज्ञा थी कि जो कोई उसको धनुर्षविद्या में जीतेगा—उस ही के साथ विवाह करैगी, वसुदेव ने उसको जीतकर उससे विवाह किया।

वसुदेव फिर दूसरे नगरको चल दिया और वहां के राजा को जीतकर उसकी कन्या से विवाह किया, फिर दूसरे नगर में चला गया और वहां के राजा की कन्या चारुहासिनी से विवाह किया जो सदा पुरुष का ही वेष बनाये रखती थी, वसुदेव ने इसके साथ बहुत दिनों तक भोग विलास किया और उससे एक पुत्र सर्पौंड्र नाम का उत्पन्न हुआ।

एक दिन श्यामा के वैरी अङ्गार को वसुदेव के यहां रहने का हाल मालूम होगया, वह वहां आया और वसुदेव को हर कर आकाश में लेगया और नीचे पटक दिया, वसुदेव गङ्गा में गिरा, गङ्गा से निकल कर वह एक नगर में गया और एक बनिये की दूकान पर बैठ गया, वसुदेव के पुण्य के प्रभाव से बनिये की बहुत बिकरी हुई, उसने अपनी कन्या रत्नवती इसको व्याह दी, इस रमणीको पाकर वसुदेव अन्तराय रहित मन माने भोग भोगने लगा।

एक दिन इन्द्रध्वज विधान देखने के वास्ते वसुदेव दूसरे नगर गया, वहा के राजा की स्त्रियां और उसकी कन्या सोमश्री भी वहां आई एक मस्त हाथी ने इन स्त्रियों के रथ को गिरा दिया, वसुदेव ने उस हाथी को मुक्कों से मार कर शांत किया और वेहोश पड़ी हुई राजा की कन्या को होश में लाया,-होश में आकर वह वसुदेव को देखते ही लम्बे लम्बे गरम २ सास लेने लगी, उसकी आंखो में आंसू आगये और [illegible] भर आया, उसने लज्जा से नम्रमुखी होकर तुरन्त ही वसुदेव का हाथ पकड़ [illegible] देव के हाथ का स्पर्श करते ही परम आनन्द लेने लगी, वसुदेव लौट उन्होंने बहुत का[illegible] या अपने घर चली गई।

राजा की कन्या सोमश्री की दासी बनिये के घर वसुदेव के पास आई और कहा कि एक दिन इस कन्या को जातिस्मरण होगया था और वह अपने पूर्व भव के पति को याद करके मूर्छित होगई थी, तब से वह अपने पहिले भव के पति की ही याद में मग्न रहती है और किसी से बात भी नहीं करती, बड़ी मुश्किल से उसने पहिले भव में अपने पति के साथ भोग विलास करने का सब हाल मुझे सुनाया और यह भी कहा कि केवली भगवान ने मुझ से कहा था कि वह हरिवंश में पैदा होगा और विद्याधरों के देश में आकर हाथी को शांत करेगा, आपने ही यह काम किया है इस वास्ते आप ही उसके पूर्वभव के पति हैं, राजा ने यह सब हाल जानकर मुझको आप के पास भेजा है कि आप उससे विवाह करलें, वसुदेव ने आनन्द के साथ उससे विवाह कर लिया और आपस में एक दूसरे का रसपान और आस्वादन करते हुए वह सुख से वहां रहने लगे।

एक दिन रानी सोमश्री वसुदेवकी भुजा पर आनन्द के साथ सोरही थी कि उसका एक विद्याधर वैरी वहां आया और हरण कर लेगया, आंख खुलने पर जब वसुदेवने सोमश्रीको अपने पास न देखा तो बहुत व्याकुल हुआ इस विद्याधरकी बहिन कन्याकुमारी थी परन्तु वह वसुदेव पर आशक्त थी इस कारण अपने भाई के द्वारा सोमश्री का हरण देख वह तुरन्त ही सोमश्री का रूप बनाकर वसुदेव के पास आगई और कहने लगी कि मैं तो गर्मी लगने से बाहर चली गई थी, इस प्रकार वह सोमश्री बनकर आनन्द के साथ वसुदेव से कामभोग करने लगी, काम भोग करने के बाद जब वसुदेव सो जाया करता तब वह पीछे से सोती और उसके जागने से पहिले ही जाग जाती, सोते समय विद्या का कुछ असर नहीं रहता है और असली रूप बन जाया करता है, एक दिन वसुदेव उससे पहिले ही जाग उठा और उस स्त्री का रूप देख उसको बड़ा आश्चर्य हुआ और उस स्त्री से असली हाल पूछा तब उसने साफ २ कह दिया कि मैं एक राजा की कन्या हूं वेगवती मेरा नाम है मेरा ही भाई सोमश्रीको हरकर लेगया है मेरे भाईने सोमश्री को उसपर राजी करदेनेके वास्ते मुझसे कहा था मैंने भी उसको राजी कर देने के अनेक उपाय किये परन्तु वह नहीं मानी आखिर मैं सोमश्री की सखी होगई और उसने अपना हाल बताने के वास्ते मुझको यहां भेजा परन्तु यहां आकर मैं आप के रूप पर मुग्ध होगई और आप की स्त्री बनकर रहने लगी हूं।

इसके बाद वह वेगवती अपने असली ही रूप में वसुदेव के पास रहने लगी और बहुत दिनों तक वसुदेव के साथ कामभोग करती रही, रमणी वेगवती के साथ

सुख से भोग भोगते एक दिन कामभोग करते करते थक कर रमणी वेगमती के साथ वसुदेव आनन्द से सोरहा था कि वेगमती का भाई आकर वसुदेव को हर लेगया, रास्ते में जब वसुदेव की आंख खुली तो उसने विद्याधर को मुक्कों से मारना शुरू किया जिससे घबरा कर उसने वसुदेव को गङ्गा नदी मे छोड़ दिया और वसुदेव एक विद्याधर के कन्धे पर पडा जो एक विद्या सिद्ध कर रहा था, वसुदेव के देखते ही उसकी विद्या सिद्ध होगई और वह वसुदेवको अपने घर ले आया, वहां एक कन्या ने वसुदेव को देखा और उसको विजयार्ध पर्वत पर ले आई, वहां एक नगर में लोगों ने वसुदेव का बड़ा उत्सव मनाया और मदनवेगा नामी एक कन्या का विवाह उसके साथ कर दिया, वह मदनवेगा बहुत मोटी मोटी छातियों से शोभित थी इस वास्ते उसको देखते ही वसुदेव का काम का वेग न रुक सका इसलिये वह बहुत काल तक उसके साथ मन मानी रमण क्रीड़ा करता रहा।

एक दिन जिनधर्म के प्रसाद से वसुदेव रमणी मदनवेगा के साथ कामभोग का आनन्द लेरहे थे कि भोग के समय रमणी मदनवेगा ने उन्हें अति ही आनन्द दिया वसुदेव ने प्रसन्न होकर उसे वर दिया और उसने यह वर मांगा कि मेरे पिता कैद में पड़ेहैं किसी तरह उनको कैदसे छुड़ा दो, बात यह थी कि एक राजाने मदनवेगा के पितासे इस मदनवेगा को अपने लिये मांगा था परन्तु उसे न मिली तो उसने मदनवेगा के पिता विद्युद्वेग से लडाई करी और विद्युद्वेग को पकड कर कैद कर लिया, वसुदेव अपने ससुर को छुडाने की फ़िक्र कर ही रहा था कि उस दुष्ट राजाने आप ही इस नगर पर चढ़ाई कर दी दोनों तरफ से खूब युद्ध हुआ और वसुदेव भी खूब लड़ा और उस दुष्ट राजा को मारकर अपने श्वशुर को कैद से छुड़ाया।

वसुदेव के साथ चिरकाल तक भोग भोगने से रमणी मदनवेगा के एक पुत्र हुआ जिसका नाम अनावृष्टि रखा गया, यह भी कामदेव के समान सुन्दर था, वसुदेव रमणी मदनवेगा के यहां आनन्द से रहते थे कि एक दिन अचानक उसको वेगमती की याद आगई और मदनवेगा को वेगमती के नाम से पुकारने लगा, मदनवेगा ने अपनी सौत का नाम सुनकर बहुत रोष किया और क्रोध करके अन्दर चली गई, इतने में मदनवेगा के बाप के वैरी राजा की स्त्री शूर्पणखा ने मदनवेगा का रूप धारण कर लिया और छलसे वसुदेव को हर कर लेगई, आकाश में लेजाकर वह उस को नीचे पटकना ही चाहती थी कि उसे वसुदेव का वैरी एक विद्याधर नज़र आगया, उसने वसुदेव को उसको सौंप दिया और मारडालने की आज्ञा देकर चली गई, उसने वसुदेव को नीचे पटक दिया परन्तु वसुदेव को कुछ भी चोट नही

आई यह स्थान राजगृह था और जरासन्ध वहां का राजा था, वहां वसुदेव ने जूआ खेला और एक करोड़ दीनार जीते जिनको उसने दरिद्रों को ही बांट दिये।

जरासन्ध को निमित्त ज्ञानी से यह मालूम हुआ था कि जो कोई एक करोड़ दीनार जीतकर दरिद्रों को बांट देगा उसका पुत्र तेरे मारने वाला होगा, इस कारण जरासन्ध ने ऐसे आदमी के पकड़ने का पूरा प्रबन्ध कर रखा था, जरासन्ध के आदमियों ने वसुदेव को पकड़ लिया और चाम के थैले में डालकर एक पहाड़ परसे नीचे पटक दिया, उसकी प्रियतमा वेगमती जो उसकी तलाश में फिर रही थी अचानक वहां आ पहुंची जिसने उसको बीच में ही थाम लिया, वेगमती वसुदेव को देख विरह से पीड़ित होकर रोने लगी और उसने वसुदेव को अपने हृदय से लगा लिया जिससे एक दूसरे के स्पर्श से उन दोनों को खूब आनन्द प्राप्त हुआ।

वसुदेव और वेगमती कुछ दिनों वहां सैर करते रहे, एक दिन वसुदेवने देखा कि एक सुन्दर कन्या एक जाल में बंधी हुई नदी में बहती हुई जारही है, वसुदेव ने दया करके उस कन्या को नदी में से निकाल लिया, कन्या ने कहा कि मैं एक राजा की बेटी हूं, मैं नदी किनारे विद्या सिद्ध कर रही थी कि मेरे वैरी ने मुझे बांधकर नदी में पटक दिया, तुम्हारे कारण मेरी जान बची है अब तुम ही मेरे पति हो, मुझे यह विद्या भी अब सिद्ध होगई है इस वास्ते इस विद्या को भी तुम ही लेलो, वसुदेव ने वह विद्या वेगमती को दिला दी और वह कन्या अपने घर चली गई, कन्या का नाम बालचन्द्रा था।

किसी कारण से एक दिन वसुदेव का वेगमती से भी वियोग होगया, इधर उधर फिरते हुए वह मिथ्यात्वी तपस्वियों के आश्रम में पहुंच गया, दर्याफ्त करने से मालूम हुआ कि यहां के राजा की कन्या प्रियंगुसुन्दरी का स्वयम्बर हुआ था जिसमें अनेक राजा आये थे परन्तु कन्या ने किसी के भी गले में वरमाला न डाली, इस पर राजाओं ने उस कन्या को जबर्दस्ती छीन लेने के वास्ते कन्या के पिता से युद्ध किया परन्तु उसने सबको परास्त कर दिया, बहुत से राजा तो मारे गये और जो बच रहे वह तपस्वी होगये जो यहां रहते हैं, वसुदेव ने उनको धर्म का उपदेश दिया और उस कन्या की प्राप्ति के लिये लालायित होकर शीघ्र ही नगर को गया।

वहां एक सेठने अपनी सुन्दर कन्या बन्धुमती का विवाह वसुदेव से कर दिया एक दिन राजकन्या की नजर वसुदेव पर पड़ गई उसे देखकर वह उस पर ऐसी अनुरक्त होगई कि खाना पीना भी छोड़ दिया, एक दिन इस राजकन्या ने बन्धुमती को बुलाया और वसुदेव की चतुराई और प्यार की बातें पूछी, बन्धुमतीने सब बातें कह

सुनाई जिनको सुनकर प्रियगुसुन्दरी वैचैन होगई और मन मन में ही मजे लेने लगी, आखिर प्रियंगुसुन्दरी से न रहा गया और वसुदेव के प्रेम में अन्धी होकर उसने वसुदेव के पास अपना सिपाही भेजा जिसने आकर कहा कि तुम्हारे विरह में प्रियगुसुन्दरी जल रही है इस वास्ते या तो उसको अपने समागमरूपी जल से शान्त कीजिये नहीं तो स्त्री हत्या का पाप तुमको लग जावेगा, वसुदेव को बड़ी सोच हुई कि यदि उसके साथ समागम किया जाता है तो धर्म विरुद्ध होता है क्योंकि उसका मुझ से विवाह नहीं हुआ है और यदि इनकार किया जाता है तो वह मर जावेगी और उसकी हत्या मेरे शिर होगी, इस प्रकार जब वसुदेव कोई बात अपने मन में तै न कर सका तो उसने प्रियगुसुन्दरी के सिपाही को यह कहकर टाल दिया कि अभी मौक़ा नहीं है, कुछ दिन पीछे देखा जावेगा, वसुदेव की यह बात सुनकर प्रियंगुसुन्दरी को बहुत तसल्ली हुई और वह आशा में ही अपने दिन विताने लगी।

एक दिन वसुदेव अपनी प्रियतमा बन्धुमती के साथ गहरी नींद में सो रहा था कि अचानक उसको एक नागकन्या ने आकर जगा दिया और एक बगीचे में लेजाकर कहने लगी कि एक नगर में कामपताका नाम की अति सुन्दर वेश्या रहती थी राजा मिथ्यात्वी था उसने यज्ञ में उस वेश्या का नृत्य कराया, वेश्या ने अपनी सुन्दरता और चटक मटक से मनुष्यों के हृदय को यहां तक भेदा कि कौशिक तपस्वी भी उस पर आशक्त होगया, परन्तु यज्ञ के पश्चात् उस वेश्या को राजपुत्र ने स्वीकार कर लिया इस वास्ते जब कौशिक ऋषि के शिष्य उस वेश्या को लेने आये तो राजा को यह कहना पड़ा कि उस वेश्या को तो मेरे बेटे ने रख लिया है इस वास्ते अब वह नही मिल सकती, ऋषि को यह समाचार सुनकर बड़ा क्रोध आया और उसने राजदर्वार मे आकर राजा से कहा कि मैं सांप बनकर तुझे डसूंगा, राजा इस बात से डरा और अपनी गर्भवती स्त्री को साथ लेकर तपस्वी होगया, आश्रम में उसके एक सुन्दर कन्या हुई जिसका नाम ऋषिदत्ता रक्खा गया, उस कन्या ने एक जैनमुनि से पञ्च अणुव्रत ग्रहण किये और युवा पुरुषों के मन और नेत्रों को व्याकुल करने वाली नवीन यौवनवती होगई।

एक दिन नगर का राजा उधर को जा निकला, ऋषिदत्ता की छातियों की शोभा ने उसे बहुत ही सुन्दरी बना रक्खा था, राजा और यह सुन्दरी दोनों ही जवान थे, एकान्त था आपस मे यह दोनो गाढ़ प्रेम के बन्धन में बँध गये और दोनो ही अपने को भूल गये, काम से व्याकुल हो किसी निर्जन स्थान में राजा ने उसके साथ मन माना काम भोग किया, भोग करते २ जब वे दोनों तृप्त होगये तो उस कन्या को

बड़ा पश्चाताप हुआ और मारे भय के उसका शरीर कांपने लगा और कहने लगी कि मैं ऋतुमती हूं यदि मेरे गर्भ रह गया तो बड़ी मुश्किल पड़ेगी राजाने कहा कि तुम कुछ मत घबराओ, पुत्र उत्पन्न होने पर तुम उसे लेकर मेरे यहा चली आना।

राजा चला गया, नौ महीने पीछे पुत्र पैदा हुआ परन्तु वह कन्या बच्चा जनने के कष्ट से मरकर मैं नागकुमारी हुई हूं, मैंने हिरणी का रूप धारण कर उस बालक को दूध पिला पिलाकर पाला, फिर तपस्विनी का रूप बनाकर उस बालक को राजा के पास लेगई और सारा हाल सुनाया तो उसने वह बालक ले लिया, मैं भी उसके मोह में वहीं रहने लगी, फिर जब यह बच्चा जिसका नाम एणीपुत्र था जवान होगया तो मैंने राजा को जैनधर्म का उपदेश दिया जिसको सुनकर राजा ने दिगम्बर दीक्षा ले ली और इस ही बालक को राजा बना दिया, उस एणीपुत्र राजा के परम सुन्दरी कन्या प्रियंगुसुन्दरी हुई जिसका स्वयम्बर किया गया परन्तु उसने किसी के भी गले में माला न डाली, अब वह पूर्णरूप से आप पर मुग्ध होरही है और कामदेव उसको बहुत ही सता रहा है, तुम यह विचार मत करो कि किसी ने इसका मेरे साथ विवाह नहीं किया है क्योंकि मैं इसको देती हू, मेरा देना ऐसा समझो मानो इसके मां बाप ने ही दी, कल कामदेव के मन्दिर में तुम्हारा इसका मिलाप होना चाहिये।

नागकुमारी देवी के वचन के अनुसार वसुदेव और प्रियंगुसुन्दरी का मिलाप होगया, जिससे कि उन्होंने गंधर्व विवाह करके अर्थात् आपस में राजी होकर मनमाना कामभोग किया और रमणी प्रियंगुसुन्दरी का मुख कमल अपने संसर्ग से प्रफुल्लित कर दिया, एकान्त में इन दोनों का गाढ़ा प्रेम-बन्धन होचुका था इसलिये प्रियंगुसुन्दरी के घर रहते २ वसुदेव को बहुत दिन बीते, इस कन्या के पिता ने भी इन दोनों को अनुरूप देख और यह जानकर कि इन दोनों का समागम देवी ने कराया है उनका विवाह बड़े ठाटबाट से कर दिया, जब इनका प्रकट रूप मे विवाह होगया तो वसुदेव भी प्रकट रूपसे इसके यहां रहने लगा और मन माने सम्भोग करने लगा, इस रीतिसे वसुदेव ने एकान्त स्थानमें कामभोग के सर्वथा योग्य प्रियंगुसुन्दरी और बन्धुमती के साथ मन माने भोग विलास आनन्द के साथ किये और बहुत काल तक उस नगर में रहा।

बहुत देर तक कामभोग करनेसे थककर एक दिन वसुदेव रमणी प्रियंगुसुन्दरी के साथ आनन्द से सोरहा था कि अचानक ही उसकी आंख खुल गई और उसने अपने सामने साक्षात् लक्ष्मी के समान बहुत ही रूपवती एक कन्या देखी, वसुदेव ने उससे पूछा कि हे कमल जैसी नेत्र वाली तू कौन है, उसने कहा कि थोडी देर में

सब कुछ मालूम हो जावेगा अब तो तुम मेरे साथ बाहर चलो इस तरह समझाकर वह वसुदेव को दूर ले गई और कहने लगी कि मैं एक राजा की कन्या हूं प्रभावती मेरा नाम है मुझे तुम्हारी प्यारी सोमश्री ने दूती बनाकर भेजा है और कहा है कि मुझे किसी तरह बचाओ, वसुदेव यह बात सुन उसके साथ हो लिया और प्रभावती उसको उठाकर ले चली और गुप्त रीति से सोमश्री के पास जा पहुंचाया, सोमश्री ने वसुदेवके वियोग में बहुत ही बुरा हाल बना रक्खा था लेकिन अब वसुदेव को देखते ही प्रफुल्लित होगई और उसकी छातिया भी बहुत मोटी और चमकदार होगई, वह दोनों एक दूसरे से चिपट गये, प्रभावती वसुदेव का सुन्दर रूप अपने हृदय में बिठाकर अपने घर चली गई और वसुदेव वहां अपना रूप बदलकर रहने लगा, एक दिन वसुदेव और सोमश्री एक साथ सोरहे थे कि सोमश्री की आंख पहिले खुल गई, उस समय उसको वसुदेव का असली स्वरूप देख वैरी का भय हुआ और वह रोने लगी, वसुदेव की भी आंख खुल गई और उसने सोमश्री को तसल्ली कर दी।

एक दिन मानसवेग ने वसुदेव को देख लिया और खूब युद्ध किया, युद्ध का समाचार सुनकर प्रभावती भी आई और कुछ विद्याए देगई जिससे वसुदेवने मानसवेगको बांध लिया, फिर उसकी मां के कहने से उसको छोड दिया जिससे वह वसुदेव का मित्र होगया और इनको सोमश्री के घर पहुंचा दिया और यह दोनों कामरस के आनन्द में अपने दिन बिताने लगे, एक दिन वसुदेव के वैरी सूर्पक को इनका पता लग गया इस कारण उसने यहां आकर और वसुदेव को आकाश में ले जाकर गंगा में पटक दिया, वसुदेव गङ्गा से निकलकर तपस्वियों के आश्रम में आये वहां एक पागल स्त्री मिली जो एक राजाकी रानी थी परन्तु एक तपस्वी ने उसको मंत्र के ज़ोरसे अपने वश में कर लिया था, उसके मरने पर उसकी हड्डियों का सेहरा बनाकर वह पागलों की तरह फिरती थी, वसुदेव ने अपने मन्त्र से उसका भूत उतारा और उसको भली चंगी कर दी।

वहां जरासंध राजा के सिपाहियों ने वसुदेव को पकड लिया और शूली चढ़ा दिया परन्तु एक विद्याधर आकर उसको आकाश में ले उडा और कहा कि मैं प्रभावती का बाबा हूं वह वसुदेव को अपने घर ले गया और प्रभावती का इससे विवाह कर दिया, कामदेव के आवेश से वह दोनों पहिले ही से एक दूसरे के आधीन होरहे थे इस वास्ते विवाह होजाने पर भोगरूपी समुद्र में मन माना अवगाहन करने लगे,

एक दिन वसुदेव रमणी प्रभावती के साथ आनन्द से सोरहा था कि उसका वैरी सूर्पक आया, और उसको हरकर आकाश में ले गया, आंख खुलने पर वसुदेव

उसको मुक्कों से मारने लगा, उस विद्याधर ने मार से घबरा कर उसको नीचे पटक दिया जिस से वह एक नदी में गिर पड़ा, और वहां से निकल कर नगर में गया, उस नगर के राजा की कन्या का यह प्रण था कि फूलमाला के बनाने में जो कोई मुझे हरा देगा वह ही मेरा पति होगा वसुदेव ने उसको हराकर उससे विवाह किया और वहीं रहने लगा, एक दिन वसुदेव के वैरी नीलकण्ठ को इस के यहा रहने का पता लग गया और उसने इसको आकाशमें ले जाकर एक सरोवरमें पटक दिया, वहां से निकल कर वसुदेव ने वहा के मन्त्री की कन्या से विवाह किया।

एक दिन वसुदेव मन्त्री की कन्या के साथ जल क्रीडा कर रहा था कि सूर्पक वहां आ पहुंचा वह फिर वसुदेव को हर लेगया और नदी में जा पटका, वहा से निकल कर वसुदेव एक वन में गया और जरा नाम की भील कन्या से विवाह किया, जिससे जरतकुमार पैदा हुआ, वसुदेव ने वहां पर अवन्तिसुन्दरी और शूर सेना कन्या से भी विवाह किया, वहा जीवयशा नाम की एक कन्या भी पति की तलाश में थी उसको भी वरा और उसके साथ और भी बहुत सी कन्याओं को व्याहा।

एक राजा की परमसुन्दरी कन्या रोहिणी का स्वयम्वर हुआ, जरासन्ध आदि अनेक राजा इकट्ठे हुए, वसुदेव भी गया और वीणा हाथ में लेकर वीणा बजाने वालों में बैठ गया, कोई भी राजा रोहिणी के पसन्द न आया तब बडी सोच हुई, इतने में वसुदेव वीणा बजाने लगा, वीणा की आवाज सुनकर रोहिणी ने उधर देखा, ज्यों ही उन दोनोंकी आखें मिली त्यों ही कामदेव अपने पैने बाणोंसे उन्हें घायल करने लगा सुन्दरी रोहिणी तुरन्त ही उसके पास गई और अपनी दोनों छातियों के बोझ से नीचे को झुक कर वसुदेव के गले में वरमाला डाल दी।

राजा जरासन्ध आदि राजाओं ने इस बात से नाराज होकर लडाई ठान दी, वसुदेव का भाई समुद्रविजय भी स्वयम्वर में आया था वह भी वसुदेव से खूब लडा परन्तु भाई को न पहिचान सका और न वसुदेव को जीत सका, आखिर वसुदेव ने अपने नाम का बाण फेंका जिसमे लिखा था कि मैं आप का भाई वसुदेव हू जो बिना पूछे घर से निकल गया था, इस पर दोनों भाई बडे प्रेम से मिले।

वसुदेव एक वर्ष तक रोहिणीके पिताके ही घर रहा और काम के आधीन हो नवीन वधू रोहिणी के मुख कमल का भौंरा बन गया इस वास्ते उसको अपनी पहिली स्त्रियें याद तक न आई, यह सब वसुदेव के पहिले तप का ही प्रभाव था कि उसने अनेक राजाओं को जीतकर रोहिणी जैसी सुन्दरी स्त्री पाई।

रोहिणी के एक सुन्दर पुत्र हुआ जिसका नाम रामबलभद्र रक्खा गया, एक दिन बालचन्द्रा की माता वहां आई और कहने लगी कि वेगमती और मेरी कन्या बालचन्द्रा आप को बहुत याद करती हैं, इस समय बालचन्द्रा के तो प्राण भी तब ही बच सकते हैं जब वहां जाकर आप उससे विवाह करके उसके चित्त को आनन्दित करें, वसुदेव उसके साथ चला गया और अपनी प्यारी वेगमती से मिला, बालचन्द्रा के साथ विवाह किया और उन दोनों के साथ मनमाने भोग करता हुआ वहीं रहने लगा।

एक दिन वसुदेव को घर आने का ख़याल आया और वेगमती और बालचन्द्रा को साथ लेकर मदनवेगा के यहां आये और उसको और अपने पुत्र अनावृष्णि को साथ लेकर प्रभावती के यहां आये और उसको भी साथ लेकर नीलयशा के यहां गये और उसको साथ ले प्रियंगुसुन्दरी और बन्धुमती के यहां गये, फिर उनको साथ ले सोमश्री के यहां गये, फिर उसको साथ ले रत्नावती के यहां गये और उसको साथ ले चारुहासिनी के यहां गये वहां से उसको और पौंड्रको साथ ले अश्वसेना के पास गये फिर उसको साथ ले पद्मावती के यहां गये फिर उसको साथ ले वेदसामपुर गये वहां अपने बेटे कपिल का राज्याभिषेक करके कपिला को साथ लिया और मित्रश्री के यहां गये फिर तिलवस्तुक नगर गये वहां से पांच सौ विवाहिता स्त्रियों को साथ लेकर सोमश्री के यहां गये, फिर उसको साथ लेकर गन्धर्वसेना और मन्त्री की पुत्रीको साथ लिया, फिर अपने पुत्र अक्रूरदृष्टि और विजयसेना को साथ लिया, फिर पद्मश्री, अवन्तिसुन्दरी, शूरसेना और उसके पुत्र को साथ लिया फिर जरा, जीवद्रयशा और अन्य स्त्रियों को साथ ले अपने घर पहुंचे।

घर आकर वह लोगों को शस्त्रविद्या सिखाने लगा, कंस को भी शस्त्रविद्या सिखाई, कंस ने जब अपने पिता उग्रसेन को कैद करके मथुरा का राज्य प्राप्त करलिया तब वह वसुदेव को मथुरा लेगया और गुरुदक्षिणा में अपनी बहिन देवकी उसको ब्याह दी, वसुदेव लावण्यवती रमणी देवकी के साथ मनमानी क्रीड़ा करते हुए वहां रहने लगे।

राजा उग्रसेन भी हरिवंश में ही हुआ है जो मथुरा का राजा था, जब यह कंस राजा उग्रसेन की रानी के गर्भ में आया था उस समय इसके माता पिता को बहुत भारी क्लेश हुआ था, उन्होंने लाचार होकर इसको एक सन्दूक में बन्द करके गङ्गा में बहा दिया था, एक कलालनी ने यह सन्दूक निकाल लिया और इसको पाला वहां जो वेश्याओं की लड़कियां शराब मोल लेने आती थीं उनको बहुत दिक़ किया

करता इस वास्ते कलालनी ने भी इसको निकाल दिया, तब इसने वसुदेव के पास आकर शस्त्रविद्या सीखी, फिर जरासंध के एक वैरी को वश कर लेने के कारण जरासंध की एक बहिन जिवद्यशा से विवाह किया।

कंस का एक भाई मुनि होगया था, एक दिन वह अहार को कंस के घर आया, कंस की स्त्री देवकी के रजस्वला समय के वस्त्र ले मुनिराज के आगे बैठकर हंसी दिल्लगी उड़ाती हुई कहने लगी कि देखो यह तुम्हारी बहिन देवकी के आनन्द वस्त्र हैं, इस पर मुनिराज ने कहा कि इस ही देवकी के गर्भ से जो बालक होगा वह ही तुम्हारे पति की जान लेगा, यह सुनकर रानी के होश उड़ गये वह थरथर कांपने लगी और यह विचार करके कि मुनि का वचन खाली नहीं जाता है वह कंसके पास गई और सब हाल सुनाया।

कंस ने वसुदेव से एक वर प्राप्त कर लिया था, अब उसने अपना वर इस प्रकार मांग लिया कि देवकी कंस के ही महल में सन्तान जना करे, जब वसुदेव को इसका कारण मालूम हुआ तो उसको बहुत दुख हुआ और मुनिराजसे दर्याफ्त किया कि मेरा पुत्र कंस का मारने वाला क्यों होगा और कंस ने अपने पिता को क्यों कैद कर रक्खा है, इसपर मुनिराज ने उनके पूर्व-भव सुनाए जिसमें एक स्त्री मंगी की भी कथा सुनाई जो इस प्रकार है।

समीक्षा।

(१) आश्चर्य है कि जिस यदुराजा से यादववंश चला उसकी तो कुछ भी कथा इस ग्रन्थ में नहीं लिखी, परन्तु देवकी की यह काम कथा बहुत ही विस्तार के साथ लिख दी, इस कथा के पढ़ने से बुरे या भले कैसे परिणाम होते हैं इसकी जांच हम पाठकों पर ही छोड़ते हैं परन्तु इतना कहे बिदून नहीं रह सकते कि यह कथा किसी तरह भी धर्म कथा नहीं कही जा सकती है और ख़ासकर परम वैराग्य रूप जैनधर्म के वास्ते तो ऐसी कथा किसी तरह भी शोभा नहीं देती है।

(२) स्वर्ग के सब ही देव अवधिज्ञानी होते हैं इस वास्ते वसुदेव के पूर्व भव में जब यह महामुनि था उसका सब हाल स्वर्ग के देव स्वर्ग में बैठे ही जान सकते थे, परन्तु आश्चर्य है कि उन देवों को इन्द्र के कहने पर भी विश्वास नहीं आया और वह खुद परीक्षा करने को इस लोक में आये, हिन्दू लोगों में ऐसी २ कथा बहुत प्रसिद्ध हैं मालूम होता है कि उनकी रीस करके ही यह बेजोड़ कहानियां जैन ग्रन्थों में भी शामिल करके जैनधर्म के गौरव को घटाया गया है।

(३) जिस मुनि ने अपनी आत्मा को इतना उन्नति कर लिया था कि वह तीर्थंकर होने वाला होगया था, उसकी बाबत ऐसा लिखना कि उसने रूपवान और लक्ष्मीवान होने का निदान किया और वैसा ही होगया, वास्तव में जैनधर्म के महत्व का नाश करना है, ऐसी ही ऐसी कथाओं से जैनधर्म को धक्का लगा है और दुनियां भर में केवल १०—१२ लाख ही जैनी रह गये हैं।

(४) हिन्दू ग्रन्थों मे तो श्रीकृष्ण के रूप की यह महिमा गाई गई है कि स्त्रियां उसके पीछे २ फिरा करती थीं, परन्तु जैन कथा ग्रन्थों मे कृष्णके स्थान मे यही महिमा उसके पिता की गाई गई है जिससे बात वह की वही रही है, अर्थात् जो बुरा भला असर स्त्री पुरुषों पर कृष्ण लीला से पड़ता है वह ही जैनियों में वसुदेव की कथा से पड़ जाता है।

(५) क्या चौथेकाल की स्त्रियें अपने विषय कषाय में ऐसी बेवश थीं कि नगर भर की सब ही घरों की स्त्रियें वसुदेव का रूप देखने को दौड़ पडती हों, यहां तक कि उनके मर्द भी उनको इस बात से रोकने मे असमर्थ होगये हों, इससे तो यह पंचमकाल ही बहुत अच्छा है क्योंकि आजकल की भले घरों की स्त्रियें ऐसी निर्लज्ज और शिर बाहरी नहीं हैं कि पराये मर्द के रूप को देखने के लिये इस प्रकार बेवश होजाती हों, चौथेकाल की इस कथा से तो पंचमकाल की भली स्त्रियों पर बहुत ही बुरा प्रभाव पडता है और विशेष कर धर्म ग्रन्थ मे ऐसी कथा के लिखे रहने से फूंस में चिङ्गारी लगा देने का असर रखता है।

(६) वसुदेव ब्राह्मण का भेष बनाकर परदेश निकल गया, परन्तु ग्रन्थ में यह नहीं लिखा कि ब्राह्मण का क्या भेष होता है और उसने जैन ब्राह्मण का भेष बनाया वा हिन्दू ब्राह्मण का, जैन ब्राह्मण का तो भेष किसी जैन ग्रन्थ में लिखा ही नहीं है बल्कि इतना ही लिखा है कि अनुव्रती श्रावकों को भरत महाराजने ब्राह्मण की पदवी दे दी थी, हां हिन्दू ब्राह्मण भीख मांगना अपना पेशा समझते हैं और जनेऊ दिखाने के लिये नङ्गी छाती करके और खूब तिलक लगाकर और लुटिया हाथ मे लेकर मांगने को परदेश निकल जाते हैं, यह ग्रन्थ ऐसे ही समय में लिखा गया है जब कि ब्राह्मणों का बडा भारी प्राबल्य था और ब्राह्मण के नाम से ही परदेश में ठहरने को ठिकाना और खाने को भोजन अवश्य ही मिल जाता था, इस कारण कभी २ कोई नीच आत्मा पुरुष ब्राह्मण न होने की अवस्था में भी ब्राह्मण का रूप बनाकर और परदेश में जाकर अपना पेट पाल लेता था और अब भी कोई कोई नीच पुरुष ऐसा कर लेता है, परन्तु वसुदेव जैसे महातेजस्वी और महापराक्रमीके वास्ते ऐसा लिखना

कि वह ब्राह्मण के रूपमें परदेश निकला बड़े ही कलंक की बात है और कथाके बनावटी होने और बेजोड़ होने को सिद्ध करती है।

(७.) गन्धर्वो की कन्याओं के साथ विवाह करके कुछ दिनों वहां रहना फिर बिना कहे ही चल देना, वसुदेव की उदण्डता को और इस बात को सिद्ध करता है कि सतयुग में स्त्रियों की कुछ भी कदर नहीं थी और उस समय के पुरुषों की ऐसी महाअन्याय रूपप्रवृत्ती थी कि एक स्त्री को ब्याह कर नये २ चाव में कुछ दिन उसके साथ प्रेम किया फिर उसको छोड़कर दूसरी ब्याह ली, फिर कुछ दिन उससे प्रेम करके तीसरी ब्याह ली, वसुदेव की कथा इस प्रथा का जीता जागता दृष्टान्त है परन्तु सतयुग की दुर्दशा नहीं हो सकती है बल्कि यह कथा उस ही समय की है जब कि यह ग्रन्थ लिखा गया था, शोक है कि ऐसी २ कथाओंको कलियुग के सिर मढ़ कर सतयुग को महा कलियुग करके दिखा दिया है।

(८) वसुदेव की इस कथा के पढ़ने से यह भी मालूम होता है कि जिस समय का यह वर्णन है उस समय के लोग अपनी कन्याओं को घास फूस और ढोर डंगर की समान समझते थे तब ही तो जरा २ सी बात पर लोग वसुदेवको कन्या पर कन्या देते रहे, परन्तु यह अवस्था भी सतयुग की नहीं हो सकती है। बल्कि यह अवस्था भारत के अति पतित समय की है, ऐसी ही खोटी प्रथाओं के कारण भारत डूबा है और भिन्न देशवासियों को इसका शासन अपने हाथ में लेना पड़ा है।

(९) वसुदेव एक दिन रात को श्यामा से अधिक भोग करने से थककर गहरी नींदमें सो गया, ऐसी कथनशैली मामूली तौर पर भी सभ्यता से गिरी हुई समझी जाती है और धर्मग्रन्थ को तो यह शैली बिल्कुल ही बदनाम करने वाली है।

(१०) इस प्रकार वह दोनों गहरी नींद में सोये पड़े थे कि इतने में अंगारक आ कूदा और वसुदेव को श्यामा की भुजा से अलग कर ले गया, यह बात कथा को कामरस से भरने के वास्ते ही लिखी गई है नहीं तो इतना ही लिखना काफी था कि एक दिन अंगारक वसुदेव को सोते से उठा ले गया, परन्तु शोक है कि कामरस की अधिक भरमार ने वसुदेव की सारी ही कथा को ऐसा बना दिया है कि यह श्रीआचार्य महाराज की लिखी हुई कदाचित् भी प्रतीत नहीं होती।

(११) आंख खुलते ही श्यामा तलवार लेकर उठी और अङ्गारक से जा लड़ी परन्तु ग्रन्थकर्ता को यह न सूझी कि अगर श्यामा में अङ्गारक से लड़ने की शक्ति होती तो वह उसके बाप का राज ही क्यों छीन सकता, क्योंकि अंगारक ने तो अपनी विद्या के बल से श्यामा के पिता का राज्य ही छीन रक्खा था और श्यामा को इस बात का बड़ा शोक था।

(१२) जब अंगारक ने श्यामा से लाचार होकर वसुदेव को आकाश में छोड़ दिया तो श्यामा की दासी ने वसुदेव को अधर में ही दबोच लिया जो श्यामा की आज्ञानुसार पहिले से ही वहा खड़ी थी, कथा की इस बात पर किसी तरह भी विश्वास नही हो सकता है क्योंकि अव्वल तो श्यामा आंख खुलते ही तलवार लेकर दौड़ी थी, दूसरे उसको तो यह यह मालूम नही था कि वसुदेव कहा गया, उसको कौन ले गया, और किधर लेगया तब पहिले से ही दासी को इस बात के लिये खड़ा कर देना कि वह वसुदेव को गिरते ही दबोच लेवे, किसी तरह भी सम्भव नही हो सकता है इसमें सब से ज्यादा गौरतलब बात यह है कि अगर कोई दासी आकाश में खड़ी भी की गई हो तो उसको यह मालूम ही नहीं हो सकता था कि वसुदेव कहा से छोड़ा जावेगा जिससे वह ऐसी जगह खड़ी होजावे कि वह गिर कर उसके ही हाथों पर आकर पड़े ।

(१३) जब दासी वसुदेव को लिये जारही थी तो एक आवाज़ आई कि वसुदेव को यहीं छोड़ जाओ इसको यहां लाभ होने वाला है, वह आवाज़ किसी ने दी यह बात ग्रन्थ में जरूर दिखानी चाहिये थी, ऐसी बातों के न खोलने से पढ़ने सुनने वालों को अनेक मनकल्पित मिथ्या श्रद्धान होजाते हैं ।

(१४) यह बात कभी सम्भव नही है कि ऐसी आवाज़ के सुनने से दासी श्यामा की आज्ञाके विरुद्ध वसुदेवको वही छोड़ देती, अंगारक जैसे वैरियोंकी मौजूदगी में तो ऐसी आवाज पर किसी तरह भी विश्वास नही हो सकता है, इससे यह कहानी बिल्कुल बनावटी होगई है ।

(१५) इसके सिवाय यह तो किसी तरह भी नहीं हो सकता था कि दासी उसको ऐसी बेपरवाही से छोड़ती जिससे वह एक तालाब में जा पड़े ।

(१६) भारतीय जैन सिद्धान्त प्रकाशिनी संस्था की तरफ से हरिवंशपुराण का अनुवाद करने वाले न्यायतीर्थ श्रीयुत प० गजाधरलालजी अपनी प्रस्तावना में लिखते हैं कि हरिवंशपुराण के कर्त्ता श्रीजिनसेन महाराज गानविद्या में पूर्ण पांडित्य रखते थे क्योंकि उन्होंने उस ग्रन्थ में जगह २ पर अपने गानविद्या के पांडित्य का पूर्ण परिचय दिया है, परन्तु हमको तो यह शोक है कि ग्रन्थकर्त्ता ने इस गानविद्या के शौक़ में कथा के अनेक पात्रों को गानविद्या पर इतना अधिक मुग्ध सिद्ध किया है कि उस समय की बहुधा भले घरों की कन्याओं की यह ही प्रतिज्ञा थी कि जो कोई हमको गाने बजाने में जीतेगा उस ही से हम विवाह करावेंगी, कथा के बनावटी होने का इससे अधिक और क्या सबूत हो सकता है ।

(१७) वसुदेव की कथा में सेठ चारुदत्त की कहानी तो बहुत ही अद्भुत् है। मन्दिर में श्रीजिनेन्द्र देव की पूजा करते हुए ही चारुदत्त के माता पिता का एक मुनिराजसे जो उस समय वहां आगयेथे यह पूछना कि हमारे कोई पुत्र होगा या नहीं और मुनिराज का उनको यह बता देना कि शीघ्र ही तुम्हारे एक पुत्र होगा, क्या कुछ कम आश्चर्यकी बात है, इस कथनसे स्पष्ट सिद्ध है कि इस ग्रन्थके बनने के समय भट्टारकी युग शुरू होगया था और भट्टारक जैसे लोग ही मुनि और आचार्य समझे जाते थे और मन्दिर में बैठकर लोगोंको उनके गृहस्थ की बातें बताया करते थे और लोग पूजन करते हुए भी ऐसी ही बातें मुनि महाराजों से पूछते रहते थे, इससे सिद्ध है कि यह कथा चौथेकाल की नहीं है बल्कि भट्टारको युग में ही घड़ी गई है।

(१८) भट्टारकी युग में ही इस कथा के गडे जाने का एक यह भी सबूत है कि चारुदत्त को बचपन में ही अनुव्रतों की दीक्षा दे दी गई थी, फिर पीछे १२ वर्ष तक चारुदत्त वेश्या के यहां रहा और उस ही के यहा खाता पीता और मौज करता रहा और अपना करोडों रुपया वेश्या को चटा दिया, यहा तक कि अपनी स्त्री का जेवर भी उतरवा मँगाया, परन्तु ग्रन्थ में कहीं यह नहीं लिखा कि ऐसा करने से उसके अणुव्रत क़ायम रहे या जाते रहे, ग्रन्थ की कथन शैली से तो यह ही मालूम होता है कि वह पक्का जैनधर्मी ही रहा क्योंकि १२ वर्ष के पीछे जब वह परदेश गया है तो वहां उसने एक आदमी को मरते समय और एक बकरे को प्राण निकलते समय नौकारमन्त्र दिया है जिसके प्रभाव से वह दोनों देव हुए हैं और देव होकर उन दोनों ने उसकी पूजा की है।

(१९) मुनि महाराज ने भी चारुदत्त के माता पिता से चारुदत्त के विषय में कहा था कि तुम को अति उत्तम पुत्र की प्राप्ति होगी, क्या ऐसे ही को उत्तम पुत्र कहते हैं कि जो १२ वर्ष तक वेश्या के ही यहा रहै और अपना क़रोडों रुपये का धन वेश्या को चटा दे।

(२०) सब से पहिले चारुदत्त वेश्या का नृत्य देखने गया था, फिर उसका चाचा उसको वेश्या के यहा लेगया जहा उसने वेश्या के सङ्ग जुआ खेला, ग्रन्थ की कथन शैली से तो यह ही मालूम होता है कि मानो वेश्या के नृत्यमे जाना और जुआ खेलना अनुव्रती के वास्ते अनुचित ही नहीं है।

(२१) अपने माता पिता के विषय में चारुदत्त की कथन शैली को तो देखो कि वह केवल इतना ही कहने पर सन्तुष्ट नही होता है कि जब मेरे माता पिता को चिरकाल तक सन्तान न हुई तो वह सोच में रहने लगे बल्कि इस बात को वह इन

शब्दों में कहता है कि चिरकाल तक कामभोग करते हुए भी जब मेरे माता पिता के सन्तान न हुई, यह कथा श्रीसर्वज्ञ भाषित कही जाती है तो क्या चारुदत्त के मुह से ही यह शब्द निकले थे, यदि वास्तव मे यह शब्द चारदत्त के मुख से ही निकले हुए ज्यों के त्यों हैं तो इन से तो उसके अति उत्तम होने के सिवाय उसके बहुत मामूली सभ्य मनुष्य होने में भी सन्देह हो जाता है क्योंकि अपने माता पिता के विषय में तो कोई घटिया आदमी भी इस प्रकार वार्तालाप नही करता है और यदि चारुदत्त के मुख के यह शब्द नहीं हैं बल्कि ग्रन्थकर्त्ता की काव्य चतुराई है तो ग्रन्थकर्त्ता के आचार्य होने में भारी सन्देह है।

(२२) चारुदत्त ने भी जो कहानी विद्याधर की सुनाई है वह भी कामरस से ही भरी हुई है और बहुत अद्भुत है, अगर कोई मामूली आदमी किसी मामूली सांसारिक कहानीमें इस घटना का वर्णन करता तो वह इतना ही कहता कि हम एक नदी पर सैर को गये थे वहां पास के वन में हमने एक वृक्ष पर एक विद्याधर को लटका हुआ देखा, परन्तु आश्चर्य है कि ग्रन्थकर्त्ता ने अपने को आचार्य प्रगट करते हुए भी इस धर्मग्रन्थ में चारुदत्त के मुख से यह ही कहलवाया है कि वहां हमने हरे केलों से बने हुए घर मे रतिक्रीड़ा की सेज देखी, रतिक्रीडा करने से उस सेज के पुष्प और पत्ते मुर्झा गये थे, तब हम आगे बढ़े और वन में एक वृक्ष पर एक विद्याधर को लटका हुआ देखा, रतिक्रीडा के इस कथन से और तो कुछ बात बढ़ी नहीं हां इससे यह कथा महा काम कथा की शोभा को अवश्य प्राप्त होगई है।

(२३) जहां विद्याधर वृक्ष से लटक रहा था वहां ही एक ढाल के नीचे तीन दिव्य औषधियों का रखा हुआ होना बिल्कुल ही बेजोड़ बात है और इस बात को सिद्ध करता है कि कहानी जोडी नहीं जा सकती है, क्योंकि इस विद्याधर को तो उसके दोस्त धूमसिंह ने रतिक्रीडा करते हुए को पकड कर और वन में ले जाकर इस वृक्ष से लटका दिया था, तब यहां कौन इन दिव्य औषधियों को रखने आसकता था और इस विद्याधर को इन औषधियों की कैसे खबर हो सकती थी।

(२४) चारुदत्त ने ढाल के नीचे से औषधियां निकाल कर उस विद्याधर को वृक्ष से छुड़ा भी लिया और उसके घाव भी अच्छे कर दिये, तब वह विद्याधर तलवार लेकर अपने वैरी के पीछे भागा और रास्ते ही में जा पकड़ा, यह बात भी बिल्कुल बेजोड है, क्योंकि अगर यह विद्याधर धूमसिंह की अपेक्षा ऐसा अधिक जोरावर होता तो वह उसको वृक्ष पर लटका कर उसकी स्त्री को कैसे उड़ा ले जासकता, परन्तु इस कथन में तो यहां तक तमाशा किया गया है कि वह विद्याधर भागकर उन तक पहुंचा ही नहीं बल्कि लड़कर शीघ्र ही अपनी स्त्री को छुड़ा भी लाया।

(२५) इस विद्याधर के मुख से भी जो इसकी व्यथा कहलाई गई है उसको भी कामरस से बुरी तरह से भरा गया है, वह भले मानुषों की तरह यह कह सकता था कि मैं अपनी स्त्री के साथ शैर करने को यहां आया था कि इतने में धूमसिंह यहां आ पहुंचा, परन्तु ग्रन्थकार ने उसका इतना कहना काफ़ी नहीं समझा और उसकी तरफ़ से यह ही वर्णन किया कि जब मैं यहां अपनी स्त्री से कामभोग कर रहा था उस ही समय अचानक धूमसिंह आगया, पाठकगण ! क्या धर्मग्रन्थों की ऐसी ही अनोखी सभ्यता होनी चाहिये।

(२६) उनके कामभोग करते समय ही धूमसिंह का आना कहानी को बिलकुल ही बनावटी सिद्ध करता है और इस पर कामकथा का गाढ़ा रङ्ग चढ़ाने के वास्ते ही यह बात गढ़ी गई या वर्णन की गई मालूम होती है।

(२७) हिन्दूधर्म के तपस्वियों का अपनी स्त्री के साथ जङ्गल में रहना और उनकी कन्याओं पर राजपुत्रों का आशक्त होना हिन्दू ग्रन्थों में तो बहुत कुछ वर्णन है और वह कथन मिथ्या ही प्रतीत होता है परन्तु जैनग्रन्थों में भी उनका वर्णन होना उनकी कथाओं को बिलकुल ही सच करता है और यह सिद्ध करता है कि चौथेकाल में हिन्दूधर्म का वास्तव में ऐसा ही प्राबल्य था जैसा कि उनके ग्रन्थों में लिखा है, हरिवंशपुराण की कथन शैलीसे तो यह ही सिद्ध होता है कि चौथेकाल में भी अधिकतर हिन्दूधर्म का ही प्रचार था, क्योंकि इसमें तपस्वियों और ब्राह्मणों का ही जगह २ पर वर्णन किया गया है परन्तु यह बात विश्वास के योग्य नहीं हो सकती है कि चौथेकालमें भी हिन्दूधर्मका इतना अधिक प्रचार रहा हो, इससे तो यह ही सिद्ध होताहै कि इस ग्रन्थमें चौथेकालका वास्तविक कथन नहीं है बल्कि ग्रन्थ लिखे जानेके समय जो दशा थी वह ही दशा इस ग्रन्थमें चौथेकालकी वर्णन करदी गई है।

(२८) विद्याधर राजा ने अपनी बहिन गन्धर्वसेना चारुदत्त को इस वास्ते सौंप दी कि तुम इसको अपने घर ले जाओ और वहीं इसका विवाह कर दो, यह बिलकुल ही अप्राकृतिक बात है जो किसी तरह भी विश्वास नहीं की जा सकती है और यदि वास्तव में सत्य है तो मानना चाहिये कि वह बहुत ही बुरा समय था, क्योंकि उस समय कन्याओं की कुछ भी कदर नहीं था।

(२९) मरते समय कानमें नौकार मन्त्र पड़ जाने से एक मनुष्य और एक बकरे का देव होजाना जैनधर्म की महत्त्वपूर्ण कर्म फ़िलोसफ़ी को बट्टा लगाता है और जैनधर्म को नीचे गिराता है।

(३०) चारुदत्त के परदेश जाने पर उसकी प्यारी वेश्या उसके घर आरही और श्रावक के व्रत ले लिये और चारुदत्त ने भी वापिस आकर उसको अपना लिया अर्थात् उसको अपनी स्त्री बना ली और फिर मुनि होगया, यह कथन तो बेशक अध-श्रद्धा वालों को भी स्वीकार न होगा और यह ग्रन्थ पञ्चमकाल में लिखे जाने के कारण ही ऐसे कथनों का इस ग्रन्थ में सम्मिलित होजाना मानते होंगे।

(३१) अष्टाहिका के उत्सव में एक कन्या भगवान के आगे नाच रही थी और भक्ति में लीन होरही थी कि इतने मे वसुदेव वहां पहुंच गया और वह कन्या वसुदेव पर आशक्त होगई, वाह वाह भक्ति में लीन होने का क्या बढ़िया सबूत दिया है, पाठकगण! जवान जवान स्त्रियों और जवान जवान पुरुषों पर कामचेष्टा का बुरा असर डालनेके वास्ते इससे भी बढ़िया कोई बात हो सकती है जिसमें धर्मस्थान पर अनेक स्त्री पुरुषों के इकट्ठे होने पर भगवान के सामने ही आपस में आशक्त होजाने का उदाहरण दिखाया गया है और कथाको चौथेकाल के महान् पुरुषोंकी कथा बताकर उसका प्रभाव भी बहुत कुछ बढ़ाया गया है, वाह २ क्या धर्मकथा है और इस कथा के द्वारा परम वैराग्य रूप जैनधर्म को कैसा कुछ पाठकों के हृदय में घुसाया गया है।

(३२) काम कथाका कोई भी अङ्ग न रह जाय इस वास्ते ग्रन्थ में उस कन्या के रूप का भी वर्णन कर दिया गया है जो भगवान की भक्ति में लीन होरही थी, अर्थात् उसकी छातियां गोल और उठी हुई थीं, ओंठ लाल थे और हाथ पैर कमल जैसे थे इत्यादिक, यह वर्णन शायद वसुदेव को निर्दोष सिद्ध करनेके वास्ते ही किया गया है जिससे सिद्ध होजावे कि उस कन्याका रूप ही ऐसे ग़ज़ब का था कि भगवान के सामने ही वसुदेव का उसपर आशक्त होजाना अनिवार्य ही था, इस कारण वह इस विषय में निर्दोष ही था, परन्तु पाठको! सावधान रहो वह चौथाकाल था इस वास्ते उस समय तो ऐसी ही बातें धर्म की बातें थी परन्तु अब जैसी करनी वैसी भरनी का जमाना है इस कारण कथा ग्रन्थों में अनेक कन्याओं के अद्भुत् २ रूप का वर्णन पढ़कर तुम अपने परिणामों को मत डिगने देना नहीं तो सीधे नर्क जाओगे, फिर कोई ग्रन्थकर्त्ता यह कह कर तुम को न छुड़ा सकेगा कि इसने तो स्वयम् अपने परिणाम नहीं बिगाडे हैं बल्कि हमारे ग्रन्थ के रसिक कथन से ही इसके परिणाम बिगड़े हैं इस वास्ते इसका इसमें कोई कसूर नहीं है और यह भी याद रक्खो कि जो लोग आजकल ऐसी कथाओं को धर्मकथा सिद्ध करने की कोशिश कर रहे हैं उनकी सिफ़ारिश भी न सुनी जायगी बल्कि जो कुछ भी फल तुमको मिलेगा वह सब तुम्हारे बुरे भले परिणामों से ही मिलेगा।

(३३) ग्रन्थ में तो इस स्थान पर इस से भी ज्यादा कामरस को टपकाया है और कथन किया है कि इस कन्या पर वसुदेव के आशक्त होजाने से जो गन्धर्वसेना नाराज होगई थी उसको वसुदेव ने घर पहुंच कर हाथ जोड कर मना लिया और वह फिर पहिले की ही तरह प्रेम करने लगी, परन्तु गन्धर्वसेना को मनाते समय जो २ रूस मनाये की वार्तालाप उन प्रेमियों में हुई होगी यदि वह सब की सब ग्रन्थ में लिख दी जाती तो यह कथा शायद और भी ज्यादा धर्मात्माओं के पढ़ने पढ़ाने योग्य होजाती।

(३४) लो पाठको ! घबराओ मत क्योंकि आगे चलकर इस कथामें उस कन्या की दादी ही वसुदेव के पास आई है और कहती है कि मेरी पोती तो काम के बाणों से ऐसी घायल होगई है कि उसने खाना पीना भी छोड दिया है, पाठको ! वह कन्या घायल हुई हो या न हुई हो परन्तु ऐसा न हो कि धर्मग्रन्थ में लिखी हुई इस पुण्यकथा के पढ़ने सुनने से तुम भी कामवासना के फन्दे में फँस जाओ, सावधान ! जवान जवान स्त्री पुरुषों को हर्गिज भी यह कथा मत पढ़ने या सुनने दो, क्योंकि ऐसा न हो कि उनका कोमल हृदय बेकाबू होजाय और फिर कुछ भी करते धरते न बन पडे।

(३५) क्या सचमुच ही चौथेकाल में स्त्री पुरुषों की ऐसी नीच दशा थी जैसी कि इस कथा में दिखाई गई है, हमको तो इस पर बिलकुल ही विश्वास नहीं होता है कि उस समय के बड़े २ घरों की कन्यायें और स्त्रियें ऐसी निर्लज्ज हों, देखो इस कथा में तो यहा तक गज़ब कर दिया है कि भगवान के आगे भक्ति से नृत्य करने वाली राजकन्या नीलयशा की दादी अव्वल तो बैताल कन्या बनकर वसुदेव को बन में उठा लाई फिर स्वयं ही नीलयशा का रूप बना बैठी यहां तक कि वसुदेव उससे प्यार करने लगा तब वह अपना असली रूप बनाकर हँस कर बोली कि मै तो उसकी दादी हूं, पाठको ! चौथेकाल के राजघराने की स्त्रियों की यह दुर्दशा, बेहयाई की हद होगई, फिर वह ही दादी नीलयशा को वसुदेव के सामने करके कहने लगी कि इसके चित्त के चुराने वाले तुम ही हो, फिर कन्या से कहा कि तू इससे आलिङ्गन कर, इस पर इस कन्या ने वसुदेव का हाथ पकड लिया और दोनों को खूब ही आनन्द आया, पाठको ! जरा सोचो तो सही कि सतयुग की इस धर्मकथा से आजकल की कन्याओं और जवान २ स्त्री पुरुषों पर क्या असर होगा।

(३६) कामशास्त्र की पूरी २ शिक्षा देने के वास्ते आगे चलकर इस धर्मग्रन्थ में बतलाया है कि वह दोनों कामभोग के लिये पहाड़ पर चले गये जहां उन्होंने व-

हुत काल तक रमण क्रीड़ा करी और फूल पत्तों की सेज पर कामभोग करने के कारण उनको कुछ भी थकावट मालूम नहीं होती थी, देखो दयालु आचार्य्य महाराज ने तो उनके कामभोग का पूरा २ फ़ोटो उतार कर दिखा देने के वास्ते यहां तक बताया है कि बहुत देर तक कामभोग करने से उनको पसीना भी आगया था और उनकी आंखें भी लाल होगई थीं, धन्य है ऐसे सच्चे परोपकारियों को जो ऐसी ऐसी बातें बताते हैं परन्तु पाठको! हम इस बात को मानने के लिये तय्यार नहीं हैं कि इस कथन को अपनी दिव्यध्वनि के द्वारा प्रगट करके यह उपकार श्रीसर्वज्ञदेव ने ही किया है बलिक परम कृपालु आचार्य महाराज ने ही तुम पर कृपा करके यह कथन कर दिया है आचार्य महाराज तो अपनी सज्जनता और लघुता दिखाने के वास्ते ही श्रीसर्वज्ञदेव का नाम लेते हैं परन्तु वास्तव में यह कथन श्रीआचार्य महाराज ने स्वयम् अपनी ही बुद्धि से किया है इस वास्ते उनही का उपकार मानना चाहिये।

(३७) यह लो और तमाशा देखो कि कामभोग के पीछे अपना पसीना सुकाने के वास्ते ज्यों ही यह दोनों मण्डपसे बाहर आये तब ही नीलयशा का आशिक नीलकण्ठ भी वहां आ पहुंचा और मोर बनकर उसको उड़ा ले गया, शाबाश, चारुदत्त की कथा में भी विद्याधर की स्त्री को उसका आशिक़ धूमसिंह कामभोग करती को ही उड़ा लेगया था और यहां भी कामभोग से निपटते ही उठा लेगया, इससे पहिले पीछे इनको मौक़ा तो सब कुछ मिल सकता है, परन्तु अन्य समय में उठा लेजाने से या इस सम्बन्धमें कामभोग का कथन करने से कामरस का वह बढ़िया मज़ा नहीं जम सकता है जो इस समय जम रहा है इस कारण दयालु आचार्य ने कथा को कामरस से भरपूर करने के लिये कोई भी कसर नहीं छोड़ी है, बेशक कोई गृहस्थी आदमी किसी मामूली सांसारिक किस्सा कहानी में भी इस प्रकार का कथन बांधता हुआ लजाता है और अगर कोई ऐसा कथन कर भी दे तो वह कहानी भले मानुषों के पढ़ने योग्य नहीं रहती है, इस कारण यह आचार्य महाराज का ही दिलगुर्दा है कि ऐसे कथन को भव्यजीवों के हितार्थ परम वीतरागी श्रीतीर्थंकर भगवान का उपदेश बताकर धर्मग्रन्थ में लिख डाला जिससे यह कथन बड़े शौक़ से वैराग्यरूपी जैन मन्दिरों में स्त्री पुरुषों को उनके कल्याण के अर्थ सुनाया जाने लगा है और इसको सुनकर इस धन्य २ का शब्द निकलता है और गरदनें हिलने लगती हैं।

(३८) पाठक गण! घबराइये नहीं नीलयशा को नीलकण्ठ उड़ा लेगया तो क्या हुआ, आगे तो आप को इससे भी अधिक कामरस में डुबाया जावेगा, यह लो

ब्राह्मण कन्या सोमश्री के सुन्दर शरीर का वर्णन होने लगा, जिसकी प्राप्ति के वास्ते वसुदेव को वेद तक पढने पड़े, इस कन्या के साथ वसुदेव ने जिस २ प्रकार कामभोग किया है उसकी ऐसी गन्दी तस्वीर तो शायद किसी कोकशास्त्र में भी न मिल सके जैसी कि इस धर्मग्रन्थ में बिल्कुल ही खुल्लमखुल्ला शब्दों में वर्णन की गई है, हमको आश्चर्य है कि जैन मन्दिरों में अपनी मां बहिनों के सामने यह बेशर्मी का वर्णन किस तरह पढा जाता होगा, देखते हैं कौन २ धर्मात्मा विद्वान् ऐसे ऐसे कथन को भी वैराग्यरूप धर्म कथन सिद्ध करने की कोशिश करतेहैं और अपनी विद्या को सफल करके सर्व साधारण से वाह वाह प्राप्त करने के पात्र बनते हैं।

(३९) नीलकण्ठ फिर वसुदेव को आकाशमें उडा लेगया और आकाश में से ही नीचे छोड दिया परन्तु वसुदेव को कुछ भी चोट न आई, अव्वल वार जब वसुदेव को अंगारक उठा लेगया था तब तो इस की स्त्री की दासी ने इसको अधर में थाम लिया था और आकाशवाणी सुनकर एक विद्याके बल से उसको धीरे २ नीचे उतार दिया था परन्तु अब तो वह एकदम ही पटका गया और तालाब में जाकर पडा और कुछ भी चोट न आई, क्या यह कथा के बनावटी होने का सबूत नहीं है।

(४०) मालूम नहीं चौथेकाल में पराक्रमी लोगों को स्त्रियों के विवाहने के सिवाय और भी कुछ काम था या नहीं क्योंकि वसुदेव तो जहां जाता रहा है वहां से स्त्रियें ही ब्याहता रहा है और कुछ दिन पीछे उनको छोड़कर आगे चलता रहा है और वहां भी मनमानी स्त्रियें पाता रहा है, इससे तो यह ही सिद्ध होता है कि वह बड़े भारी कामभोग का ज़माना था, परन्तु यह दशा चौथेकाल की नहीं हो सकती है, बल्कि वास्तव में यह दशा उस ही समय की है जब कि यह ग्रन्थ लिखा गया है, उस समय के इस कामभोग की ज्यादती के कारण ही भारतवासियों को अपना राजपाठ छोडकर सब बातों में दूसरों का गुलाम बनना पड गया है।

(४१) वसुदेव फिर अङ्गारक के द्वारा आकाश से पटका गया और गङ्गा में गिरा परन्तु कुछ भी चोट न आई, वसुदेव का प्रत्येक बार पानी में ही गिरना कथा को बिल्कुल बनावटी सिद्ध करता है और मालूम होता है कि ग्रन्थकार के ख़याल में पानी पर गिरने से चोट नहीं लगती है परन्तु वास्तव में ऐसा नहीं है, पानी पर गिरने से भी अवश्य चोट लगती है।

(४२) वसुदेवके पुण्य प्रतापसे उस बनिये की तो खूब बिकरी होगई जिसकी दूकान पर यह जाकर बैठा था और इस ही बात से खुश होकर उसने अपनी कन्या भी वसुदेव को ब्याह दी परन्तु जब वसुदेव को या उसकी स्त्री को उसके वैरी उठा

ले जाते थे तब इसका पुण्य प्रताप कहां चला जाता था, जिसकी स्त्री तक को कोई दूसरा आदमी उठा ले जावे उसके बराबर अभागा दुनिया में और कौन हो सकता है, परन्तु कथा की शैली से तो यह ही मालूम होता है कि चौथेकाल में यह बात इतनी बुरी नही समझी जाती थी जितनी कि अब समझी जाती है, उस समय तो यह एक साधारण बात थी और बहुधा बड़े घरों की स्त्रियों को बड़े आदमियों के द्वारा हरण होता ही रहता था, इस कारण वह बहुत ही बड़े अन्धकारका समय था, परन्तु ऐसी बुरी दशा चौथेकाल की कदाचित् भी नही हो सकती है यह तो अति ही पतित समय की बात लिखकर ख्वामख्वाह ही चौथेकाल को बदनाम किया गया है जिससे पाठकों पर इसका बहुत बुरा प्रभाव पड़ता है।

(४३) धर्म उत्सव के समय की एक और काम कथा लीजिये, इन्द्रध्वज विधान में राजकन्या सोमश्री को हाथी ने गिरा दिया, वसुदेव ने उसको बचाया, वह वसुदेव पर आशक्त होगई और वसुदेव का हाथ पकड़ कर खूब आनन्द लेने लगी, यह कथा भी जवान लड़कियों पर बुरा असर डालने वाली है।

(४४) जैन कथा ग्रन्थों में बहुधा ऐसी कथा वर्णन की गई हैं जिसमें जाति-स्मरण के द्वारा कन्यायें अपने पहिले भव के पति की याद करके कामवश होगई हैं और इस तलाश में रहने लगी हैं कि अब उसने कहां जन्म लिया है जिससे अब भी उस ही से विवाह कराया जावे, आदिपुराण में श्रीमती और वज्रजङ्घ की यह ही कथा बहुत विस्तार के साथ लिखी गई है, यहा सोमश्री की भी यह ही कथा है, पूर्वभव के पति के भोगों को याद करके तड़पना कुमारी कन्याओं वास्ते बहुत ही शर्म की बात है परन्तु इससे कथाकार को बिना व्याही हुई कन्याओं की कामवासना दिखाने और अपनी कथा को उच्चकोटी की कथा बताने का बहाना जरूर मिल जाता है और इससे स्त्रियों की कामवासना को प्रबल उत्तेजना अवश्य होजाती है, इस कारण जो धर्मात्मा पुरुष इन बातों को ना पसन्द करते हों उनको कम से कम यह कोशिश जरूर करनी चाहिये कि यह कथा कन्याओं के पढ़ने मे न आवे।

(४५) आगे चलकर सोमश्री को भी एक विद्याधर हर ले गया और पहिली कथाओंके समान उसका भी हरण उसी समय हुआ जब कि वह वसुदेव की भुजा पर आनन्द के साथ सो रही थी, पाठको! क्या अब भी आपको इस कथा के बनावटी होने और कामरस से भरपूर किये जाने में सन्देह है।

(४६) पाठको! अब तुम अपने मनको बहुत अच्छी तरह थामकर ही आगे की कथाको पढ़ना क्योंकि इस धर्मग्रन्थ में अब ऐसी काम कथा वर्णन होने वाली है

जो अच्छे भलों के मनको भी डगमगा देगी, शोक है कि इस कथा ने चौथेकाल को तो भ्रष्ट किया ही है परन्तु ऐसा न हो कि यह पंचमकाल भी इससे भ्रष्ट हो जावे। क्योंकि कामवासना तो इस जीव को अनादिकाल से ही लगी हुई है, अगर यह ही कामरस इसको धर्मग्रन्थों के द्वारा भी खूब छकाकर पिलाया जाने लगे तब इस बेचारे का क्या ठिकाना, देखो इस कथा में जो विद्याधर सोमश्री को हर ले गया था उसने अपनी ही सगी बहिन कुमारी कन्या वेगवती को इस बात के वास्ते नियत किया कि वह वसुदेव की स्त्री सोमश्री को उस विद्याधर के साथ भोग करने पर राजी कर दे। और उस निर्लज्ज कन्या ने इस बात की बहुत कुछ कोशिश भी की, फिर जब वह ही कन्या सोमश्रीका सन्देशा लेकर वसुदेव के पास गई तो वहां वसुदेव पर आशक्त हो-कर कामवेदना से ऐसी पागल होगई कि स्वयम् ही सोमश्री का रूप बनाकर वसुदेव से भोग करने लगी और वसुदेव भी ऐसे भले मानुष निकले कि जब उनको यह मा-लूम भी होगया कि यह स्त्री सोमश्री नहीं है बल्कि कुमारी कन्या वेगवती है तब भी वह बिना विवाह किये उसके साथ बराबर भोग करता ही रहा, क्या इस कथा के बराबर कोई खोटी कथा हो सकती है, क्या जिस कालमें राजघराने के उत्तम २ स्त्री पुरुषों के द्वारा भी ऐसे २ महापाप होते थे वह भी सतयुग का समय कहलाया जा सकता है क्या जिस पुस्तक में ऐसी २ कथाओं का वर्णन हो वह धर्मपुस्तक मानी जा सकती है और क्या ऐसी कथाओं के पढ़ने सुनने से साधारण स्त्री पुरुष अपने परिणामों को बिगाड़ने से बचा सकते हैं, यह तो ऐसी बड़ी भयानक कथा है कि इसकी जितनी भी बुराई की जावे उतनी ही थोड़ी है, परन्तु आश्चर्य है कि आचार्य महाराज ने इस ग्रन्थ में इन महापापों की कुछ भी बुराई नहीं की और न इनका कोई बुरा परिणाम ही दिखाया, बल्कि उन्होंने तो इस को भी वसुदेव की पुण्य कथा में ही गर्भित कर दिया है जिससे स्पष्टरूप से यह सारी ही कथा धर्मकथा के बदले में महा कामकथा होगई है और जैनधर्म के अनुसार किसी तरह भी पढ़ने के योग्य नहीं रही है, इस स्थान पर हम जैनधर्म के सच्चे धर्मात्माओं और जैन जाति के सच्चे शुभचिन्तकों को दुहाई देते हैं कि भाइयो अगर तुमको अपना और पराया कल्याण करना मंजूर है तो डरो और लोक लज्जा छोड़कर धर्मग्रन्थों में से ऐसी कथाओं के निकाल देने का बीड़ा उठाओ, यह मनुष्य जन्म बराबर नहीं मिलेगा, इस वास्ते इसको लोक प्रशंसाके वास्ते मत बर्बाद करो बल्कि इससे ऐसा महापुण्य प्राप्त करो जो आगे बहुत कुछ काम आवे और तुम्हारे कल्याण का हेतु हो।

(४७) आगे चलकर वेगवती का भाई वसुदेव को हर लेगया, परन्तु कब, प-हिले कथनों के समान उस ही समय जब कि वह वेगवती के साथ आनन्दसे सो रहा था, पाठको किसी के हरण करने का यह कार्य सब किस्सी ने ऐसे ही समय में क्यों किया कि जब स्त्री पुरुष आनन्द के साथ एक दूसरे से चिपट कर पड़े हुए हों, क्या इसका यह ही कारण नही है कि ऐसे कथनसे कहानी कामरसमें ज्यादा पग जाती है और ज्यादा मज़ेदार बन जाती है, देखो इस बात का सबूत भी कहानी के साथ मौ-जूद है क्योंकि वसुदेव के हरण का वर्णन करने में कहानी को खूब तेज़ कामकथा बनाने के सिवाय इस बात के वर्णन करने की और कोई जरूरत ही क्या थी कि र-मणी वेगवतीके साथ कामभोग करते २ थककर जब वसुदेव सोगया तब उसका हरण हुआ, क्या कोई किसी तरह भी इस बात को बता सकता है कि कामभोग करते २ थककर सो जाने का कथन करना इस कथा के लिये अमुक कारण से ज़रूरी था, पाठको ! कथा को कामवासना का छौंक देकर कामी पुरुषों के चित्त को आनन्दित करने के सिवाय और कोई भी कारण इस कथन का नही हो सकता है इस वास्ते यह कथा किसी तरह भी श्रीसर्वज्ञदेव भाषित नहीं है और न यह ग्रन्थ आचार्य महाराज का बनाया हुआ कोई धर्मग्रन्थ है इस कारण जिस तरह हो सके संसार के लोगों को इससे बचाओ और पुण्य कमाओ ।

(४८) कहानी के बनावटी होने और जोड़ न मिलने का सबूत भी कहानी ही में मौजूद है, क्योंकि एक जगह तो यह लिखा है कि सोमश्री को हर कर लेजाने के पीछे विद्याधर ने अपनी बहिन वेगमती को नियत किया कि वह सोमश्री को उसके साथ भोग करने के लिये राज़ी करदे और वेगमती ने इस बात की बहुत कोशिश भी की परन्तु जब कुछ वश न चला तो उसका संदेशा लेकर वसुदेव के पास गई और उसको देखकर उस पर आशक्त होगई, इस ही के साथ दूसरी जगह यह भी लिख दिया है कि जब वसुदेव की आंख खुली तो वह सोमश्री को अपने पास न देख बहुत व्याकुल हुआ और पुकार ने लगा कि हाय सोमश्री तू कहां चली गई जल्दी आ जल्दी आ, तब वसुदेव का यह शब्द सुनते ही वेगमती सोमश्री का रूप बनाकर बोल उठी कि मैं यह तो हूं, वसुदेव ने पूछा प्यारी तुम बाहर कहां गई थी तब वेगमतीने (सो-मश्री के रूप में) जवाब दिया कि यहा गर्मी लगती थी इस कारण बाहर चली गई थी, पाठको ! यद्यपि इन दोनों बातों का जोड़ नही मिला है परन्तु कथा को अधिक रसिक बनाने और यह दिखलाने के लिये कि वसुदेवकी बगल से सोमश्री के एक पल के लिये भी अलग होजाने पर वसुदेव व्याकुल होकर किस तरह चिल्लाने लगता था यह कथन लिख डाला है जो कामी पुरुषों को बहुत ही पसन्द आता होगा ।

(४९) वसुदेवके तृप्त होने पर यहां भी वह आकाश से पटका ही गया और पहिले की समान पानीमें ही डाला गया और यहां से उसने मोटी २ छातियों वाली कन्या से विवाह किया जिसको देखकर वसुदेव का कामवेग न रुक सका, पाठको! क्या अब भी आप इसको कामकथा मानने के लिये तय्यार नहीं हैं, अच्छा और आगे चलिये, देखें कब तक आप इसको धर्मकथा माने रहने पर अड़े रहते हैं।

(५०) एक दिन जिनधर्म के प्रसाद से वसुदेव रमणी मदनवेगा के साथ काम सुख ले रहे थे कि भोग के समय मदनवेगा से प्रसन्न होकर वसुदेव ने उसको वर दिया, देखो पाठकगण! जिनधर्म का कैसा मजेदार प्रसाद दिखाया गया है, क्या यह ही प्रसाद पाने के वास्ते आप इस धर्म ग्रन्थ को पढ़ते हैं: और क्या यह ही प्रसाद आप को कामशास्त्रों और काम कथाओं में नहीं मिलता है, फिर इसको काम कथा कहने में आप क्यों सकुचाते हैं और यदि यह कथा महाकाम कथा न होती तो क्या इतना ही लिखना काफी न होता कि एक दिन मदनवेगा से प्रसन्न होकर वसुदेव ने उसको वर दिया, मदनवेगा के साथ कामभोग करनेसे प्रसन्न होकर वर दिया इस कथन की जरूरत कामरस बढ़ाने के सिवाय क्या किसी और कारण से भी हो सकती थी और क्या धर्मग्रन्थों की शोभा ऐसे ही कथनों से बढ़ती है।

(५१) राजगृह में जाकर वसुदेव ने जूआ खेला और एक करोड़ दीनार जीता मालूम होता है कि चौथेकाल में जूआ खेलना ऐसा बुरा नहीं समझा जाता था जैसा कि अब समझा जाता है तब ही तो उस समय भले २ आदमी जूआ खेलते थे, परन्तु यह दुर्दशा उस चौथेकाल की नहीं हो सकती है जब कि यह भारतवर्ष दुनियां भर का शिरोमणि था, बल्कि यह दुर्दशा भारतवर्ष के उस ही पतित समय की है जब कि यह ग्रन्थ लिखा गया था, उस समय के ऐसे खोटे प्रचारों के कारण ही तो भारतवासी जगत शिरोमणि के स्थान में जगत भर के दास बन गये हैं।

(५२) आगे प्रियंगुसुन्दरी की कथा जो बहुत ही लच्छेदार है और जिसके प्रत्येक लच्छे में कामरस की भिन्न २ प्रकार की लहर है, सच तो यह है कि यह एक ही कथा साधारण स्त्री पुरुषों की काम अग्नि को भड़काने के वास्ते काफी है और यदि इसको मन को पूरी तरह काबू करके न पढा जावे तो अच्छे अच्छों के मन को हिला देने वाली है इस वास्ते पाठको! इसे बहुत ही सावधान होकर पढना इसकी सब से पहिली छटा तो यह है कि एक राजा ने यज्ञ में वेश्या का नृत्य कराया, उस यज्ञ में अनेक तपस्वी भी आये थे, एक तपस्वी वेश्या पर आशक्त होगया और अपने चेलोंको वेश्याके लानेके वास्ते राजाके पास भेजा, राजाने कह दिया कि उस वेश्या

को तो मेरे पुत्र ने ग्रहण करली है, इस पर ऋषि नाराज होगया और राजा को धमकाया कि मैं तुझको सांप होकर डसूंगा, राजा यहां तक डरा कि राज छोड़कर तपस्वी होगया, कथा की इस प्रथम लड़ी में यही २ बातें दिखाई गई हैं (क) चौथेकाल में यज्ञ आदिक धर्म कार्यों में भी वेश्या का नृत्य होता था (ख) तपस्वी भी वेश्या पर आशक्त होकर नहीं शरमाते थे बल्कि खुले तौर पर अपने शिष्यों के द्वारा उस वेश्याको राजा से माँगते थे (ग) तपस्वियोंकी ऐसी बातोंसे राजाओंको भी तपस्वियों से अश्रद्धा नहीं होती थी बल्कि उनका परम प्रभाव बना रहता था (घ) राजकुमार खुले तौर पर वेश्याओं को रख लेते थे और उनके पिता इस बात से कुछ भी नाराज़ नहीं होते थे, पाठको ! चौथेकाल का यह दृश्य बेचारे पञ्चमकाल वालों पर क्या असर डालता है जरा इसको मन मे विचार लो ।

(५३) यह तो रही अन्य मतियोंकी बात, इस कथाकी दूसरी लड़ी में एक जैन मती श्रावक कन्या की कर्तूत भी सुन लीजिये, क्योंकि आगे चलकर वर्णन किया गया है कि वह राजा जो तपस्वी होगया था वह अपनी गर्भवती स्त्री को भी साथ ले गया था जिससे जंगल में ही उसके एक कन्या पैदा हुई, उस कन्या ने एक जैनमुनि से पञ्च अणुव्रत ग्रहण किये, फिर उसके जवान होने पर उस नगर का राजा वहां आ निकला और उस कन्या और उस राजा ने काम से बेवश होकर आपस में कामभोग किया, कन्या रजस्वला थी इस वास्ते कामभोग के पश्चात् वह बहुत डरी, कि ऐसा न हो कि गर्भ रह गया हो, तब उस राजाने अपना पता देकर और यह बताकर कि मैं राजा हूं उसको धीरज बँधाया, वह कन्या दुनिया के कामों में बहुत चतुर थी इस वास्ते उसने लज्जा छोड़कर यह सब बातें अपने माता पिता से भी कह दी, पाठको ! अब तो आप भी कांप उठे होंगे और सोचने लगे होंगे कि जवान २ कन्याओं पर इस कथा के पढ़ने सुनने से क्या असर होगा परन्तु अभी क्या है आगे तो इससे भी बढ़िया तमाशे देखने में आवेंगे ।

(५४) इस कथा की तीसरी लड़ी में दिखाया गया है कि ६ महीने के पीछे इस कन्याके पुत्र जन्मा पुत्र जनते हुए वह मरगई और नागकुमारी देवी हुई पाठको ! आप को तो यह ही विश्वास होगा कि कथा ग्रन्थों मे पाप का फल बुरा और धर्म का फल अच्छा दिखाकर धर्मका ही प्रचार किया गया है, परन्तु यह तो जिस कन्या ने राजा से व्यभिचार करके मुनि महाराज से ग्रहण किये हुए श्रावक के पञ्च अनुव्रतों को भी भ्रष्ट किया था उसको नागकुमारी बनाकर इस कुकर्म का अच्छा ही फल दिखाया गया है, जिससे कथा के पढ़ने सुनने वालों पर इसका बहुत ही बुरा

असर पड़ता है, यहां पर यदि कोई यह कहने लगे कि नागकुमारी होना कोई बढ़िया बात नहीं है तो उनको इस ही कथामें यह स्थल दिखा देना चाहिये जहां इस ही नागकुमारी ने वसुदेव से कहा है कि देवताओं के दर्शन निष्फल नहीं जाते इस वास्ते जिस बात की तुमको अभिलाषा हो वह वर मांगो, इस पर वसुदेव ने विनयके साथ कहा कि हे देवी ! जब मैं आप को स्मरण करूं तब आकर मेरा उपकार करना।

(५५) इस कथा की चौथी लड़ी यह है कि उस कन्या से जो पुत्र हुआ था वह राजा हुआ और उसके अति ही सुन्दर कन्या प्रियंगुसुन्दरी पैदा हुई जिसका स्वयम्वर किया गया, हज़ारों राजा आये परन्तु कन्या ने किसी को भी पसन्द न किया, इस पर उन राजाओं ने कन्या की प्राप्ति के लिये युद्ध किया हज़ारों राजा मारे गये जो बचे वह जङ्गलो मे चले गये और पहाड़ों की गुफाओं में रहने लगे और वसुदेव के उपदेश से मुनि होगये, कथा की इस लड़ी में काम की ऐसी भारी लहर दिखाई गई है कि जो राजा व्यभिचार से उत्पन्न हुआ था उसकी कन्या प्रियंगुसुन्दरी के स्वयम्बर में उस कन्या के अतिरूपवान होने के कारण हज़ारों राजा आइटे और उसकी प्राप्ति में यहां तक अन्धे हुए कि हज़ारों ने तो जान दे दी और बाक़ी जङ्गलों और पहाड़ों में रहने लगे अर्थात् चौथेकाल के लोग सुन्दर स्त्रियों पर ऐसे मोहित थे कि उसको जाति पांत और कुल और गोत्र कुछ भी नही देखते थे और अपनी जान तक दे डालते थे, इस ही प्रकार इस कथामें यह भी दिखाया गया है कि वह वसुदेव जिसने वेगमती जैसी कन्या से भी भोग करना नही छोड़ा था जो सोमश्री का रूप बनाकर वसुदेव से भोग करने लगी थी यह ही वसुदेव चौथेकाल में ऐसा पक्का जैनी माना जाता था कि जिसके उपदेश से अनेक राजाओं ने मुनिधर्म अङ्गीकार किया।

(५६) इस ही कथाकी पांचवीं लड़ी यह है कि कन्या प्रियंगुसुन्दरी इस वसुदेव को देखकर उसपर ऐसी अनुरक्त होगई कि खाना पीना भी छोड़ दिया और उसके प्रेममें अन्धी होकर अपना सिपाही वसुदेवके पास भेजा और कहला भेजा कि या तो मुझ से समागम करो नही तो मैं मरजाऊंगी, प्यारे पाठको ! अब तो आप जरूर ही कह उठे होंगे कि बेशक यह कामकथा ही है और किसी तरह भी धर्मकथा नहीं हो सकती है और यह भी विचारते होंगे कि बेशक जवान २ स्त्री पुरुषों को इसके पढ़ने सुनने से दूर रखना ही अच्छा है, परन्तु अभी आप जल्दी न कीजिये क्योंकि अभी तो आप को इस ही कथा की और भी अनेक लड़ी देखनी हैं जो संसार के मनुष्यों के हृदय को घायल करने के वास्ते कामदेवके तीक्ष्ण बाण या दुनियां भरके धर्म को भस्म करनेके वास्ते दावानल अग्नि के समान हैं।

(५७) इस कथा की छठी लड़ी यह है कि प्रियगुसुन्दरी के सिपाही के द्वारा यह समाचार सुनकर वसुदेव को सोच पैदा हुई कि यदि इस कन्या से समागम करता हूं तो धर्म विरुद्ध है और नहीं करता हूं तो वह अपनी जान खोती है जिससे मुझको स्त्री-हत्या का पाप लगता है, आखिर वसुदेव कुछ भी निश्चय न कर सका और उसने सिपाही को यह कह कर टाल दिया कि अभी मौका नहीं है, प्यारे पाठको! यह कथन अव्वल तो इस बातको साफ़ खोल देता है कि कन्या प्रयंगुसुन्दरी वसुदेव से व्यभिचार करना चाहती थी जिससे कथाके पढ़ने सुनने वालों पर इसका साफ़ २ प्रभाव पड़े और कोई बात गोलमाल न रहै, दूसरी बात यह कथन यह बनाता है कि वसुदेव इसको व्यभिचार जानकर भी यह सोचता था कि इसको करूं या न करूं, क्योंकि वह डरता था कि अगर न करूंगा तो वह अपनी जान खो देगी और उसकी हत्या मेरे शिर होगी, प्रभाव इस कथन का कथा के पढ़ने सुनने वालों पर यह पड़ता है कि किसी स्त्री पुरुष के व्यभिचार की इच्छा को न पूरा करने से जो दुख उस व्यभिचारी स्त्री या पुरुष को होता है उसकी हिंसा उसके शिर होती है जो उसकी पाप इच्छाको पूरी करने से इनकार कर देता है, हाय हाय संसार भरमें पाप फ़ैलाने का यह कैसा जबरदस्त मन्त्र है, पाठको! शीघ्रता करो और बचाओ संसार के लोगों को, इस पाप मन्त्र से, याद रक्खो यदि नहीं बचाओगे तो इसका पाप तुम्हारे शिर रहैगा।

(५८) इस कथा की सातवीं लड़ी यह है कि रात को नागकुमारीदेवी वसुदेव के पास गई, कब गई, इस कथा के नियमित चालके अनुसार उस ही समय गई जब कि वह अपनी प्रियतमा बन्धुमती के साथ गहरी नींद में सोरहा था, उसने वसुदेव को जगाया और जङ्गलमें ले जाकर प्रियंगुसुन्दरी का सब हाल सुनाया और कहा कि वह तुम्हारे ऊपर मुग्ध होरही है और कामदेव ने उसको बहुत सता रक्खा है, इस कारण तुम दोनों जङ्गल में जाकर अमुक जैन मन्दिर में अपना समागम करलो और इस बात से मत घबराओ कि इस कन्या को उसके मां बापने तुमको नहीं दी है क्योंकि यह कन्या मैं तुम को देती हूं इसका पिता मेरी सब बात मानता है इस वास्ते मेरा देना इसके मां बाप का ही देना समझो, इस नागकुमारी ने वसुदेव को प्रयंगुसुन्दरी का हाल सुनाने मे राजा के यज्ञ करने, यज्ञ में वेश्या नचाने, वेश्या पर ऋषि के आशक्त होने और वेश्या न मिलनेसे राजा पर क्रोध करने, राजा के तपस्वी होजाने, कन्या पैदा होने, एक राजा से उस कन्या का व्यभिचार कराने, उससे पुत्र पैदा होने, कन्याका मरकर नागकुमारी होने, पुत्रको पालने, उस ही

पुत्र से प्रयंगुसुन्दरी के पैदा होने, स्वयम्वर करने और हजारों राजाओं के मारे जाने आदिका सब ही हाल सुनाया, परन्तु यह सब हाल क्यों सुनाया, इसका कारण सिवाय इसके और कुछ नही हो सकता है कि एक तो इस प्रियगुसुन्दरी की कथा में कामदेव की सब ही लीला दिखाई दे जावें जिससे इस एक ही कथा के पढ़ने सुनने वालों के हृदय पर कामदेव का पूरा राज्य होजावे, दूसरे इस कारण कि इस कथा में यह सब बात स्पष्ट दिखा दी जावे कि वसुदेव को प्रियगुसुन्दरी के ग्रहण करने में में कोई धोका नहीं हुआ बलिक उसने इस बात को अच्छी तरह जानकर भी कि इसका पिता व्यभिचार से पैदा हुआ था उसको ग्रहण किया था जिससे संसार में कामदेव का ऐसा सिक्का बैठ जावे जैसा कि प्रसिद्ध है कि "काम न पूछे जात कुजात" खैर—अब आगे सुनिये कि वसुदेव और प्रयगुसुन्दरी जैनमन्दिर में मिले और वहीं एकान्त में इन दोनों ने मनमाना कामभोग किया और आगे भी छिप छिपकर आपसमें कामभोग करते रहे फिर जब बहुत दिन पीछें यह बात प्रयगुसुन्दरी के माता पिता को मालूम होगई और उनको यह भी मालूम होगया कि इनका यह समागम नागकुमारी ने करा दिया है तब उन्होंने इनका विवाह भी धूमधाम से कर दिया और तब प्रगटरूप से ही वसुदेव वहां रहने लगा और उससे मनमाना भोग करता रहा।

पाठकगण! इस कथन को पढ़कर तो आप बेशक घबरा गये होंगे क्योंकि इस में तो कामदेव की दुन्दभी बजाने के लिये जैन मन्दिर को भी भ्रष्ट कर डाला है और यहां तक दिखा दियां है कि देवियां भी मनुष्यों के व्यभिचार में सहायक होजाती हैं, यदि नागकुमारी को व्यभिचार फैलाना मजूर न होता तो क्या वह ऐसी कोशिश नहीं कर सकती थी कि उनका समागम गुप्तरीति से जैन मन्दिर में करा देनेके स्थान में प्रयंगुसुन्दरी के माता पिता को समझा कर उसका विवाह ही वसुदेव से करा देती, परन्तु इस प्रयंगुसुन्दरी की कथा में तो कामदेव की एक से एक बढ़ियां ऐसी लीला दिखलाई जारही हैं जिनको पढ सुनकर अच्छे अच्छों को भी कामदेव के आधीन होना पड़े तब बेचारी जवान जवान कन्याओं और युवा पुरुषों का तो कहना ही क्या है, इस वास्ते कथा की इस लडी के विषय में तो हम कुछ भी कहना नहीं चाहते हैं, क्योंकि इसके विषय में तो पाठकगण स्वयम् ही कह उठेंगे कि यह कथा तो साफ़ तौर पर जैनधर्म को बदनाम करने वाली, और सच्चे धर्म को बिगाड़ने वाली है, परन्तु अभी क्या है, पाठको! इस कथा की एक और भी लडी देख लीजिये तब कोई सम्मति प्रगट कीजिये।

(५९) यह आठवीं लड़ी यह है कि यह जैनमन्दिर जिसमें वसुदेव और प्रयंगु-सुन्दरी का समागम हुआ था पहिले ही से कामदेव के नाम से प्रसिद्ध था क्योंकि उसमें जिनेन्द्र भगवान की मूर्त्ति के साथ ही कामदेव और रतिकी मूर्त्ति भी विराजमान होरही थी, हरिवंशपुराण के कर्त्ता श्रीआचार्य महाराज ने भी जिनमन्दिर में कामदेव और रति की इन मूर्त्तियों के विराजमान होने की बड़ी भारी प्रशंसा की है और बतलाया है कि इन मूर्त्तियों के कारण लोग उस जैन मन्दिर में जाते थे और वहां जाकर जैनधर्म का लाभ प्राप्त करते थे, पाठकगण ! आप तो ऐसे चौथेकाल से ही घृणा करने लगे होंगे जिसमें लोगों को जैन मन्दिर में लाने के वास्ते कामदेव और रति की मूर्त्ति रखनी पड़ती हो और इस कथा को पढ़कर आप तो यह ही कहने लगे होंगे कि ऐसे चौथेकाल से तो यह हमारा पञ्चमकाल ही अच्छा है परन्तु पाठको ! ग्रन्थकर्त्ता ने तो स्वयम् ही अपनी इस बात को भी रद्द कर दिया है कि यद्यपि उस समय के लोग इस मन्दिर में केवल कामदेव और रतिकी मूर्त्ति को देखने के लालचसे ही जाते थे परन्तु वहां से जैनी होकर ही आते थे, क्योंकि आगे चलकर ग्रन्थकर्त्ता स्वयम् ही लिखते हैं कि बन्धुमती के पिता को किसी निमित्तज्ञानी ने बता रक्खा था कि जो कोई इस कामदेव के मन्दिर का दर्वाजा खोलकर कामदेव की पूजा करेगा वह ही इस कन्या का पति होगा, निमित्तज्ञानी की इस भविष्यत् वाणी को वसुदेव ने पूरा किया अर्थात् उसने ही कामदेव के मन्दिर का दर्वाजा खोलकर कामदेव और रति की मूर्त्ति की पूजा की और बन्धुमती के पिता ने उससे अपनी पुत्री व्याह दी और सारे नगर में यह बात फैल गई कि भगवान कामदेव की कृपा से इस कन्या को अति उत्तम पति मिला है, इस कथन से ग्रन्थकर्त्ता ने अपनी पहिली बात को रद्द करके यह बात स्पष्ट खोलदी है कि उस समय सब लोग भगवान कामदेव पर ही अपनी श्रद्धा रखते थे और जैन मन्दिर में कामदेव और रति की मूर्त्ति रखने से जिनमत का प्रचार नहीं होता था, बल्कि इससे भगवान कामदेव का ही डङ्का बजता था, यहां तक कि ऐसे पक्के जैनधर्मी वसुदेव ने भी जिसके उपदेश से सैंकड़ों राजा मुनि होगये थे इस मन्दिर में जाकर कामदेव और रति की पूजा की, इस ही प्रकार पाठकों को यह भी निश्चय रखना चाहिये कि इस धर्मग्रन्थ में प्रयंगुसुन्दरी की इस कथा से जिसमें कामदेव की अनेक लीलायें दिखाई गई हैं कामदेव का ही डङ्का बजता है न कि जैनधर्म का, इस वास्ते यह कथा किसी तरह भी धर्मकथा नहीं हो सकती है बल्कि पूरी और पक्की कामकथा है ।

(६०) इस बात का अधिक निश्चय करने के लिये इतनी बात और भी बता देनी जरूरी है कि ग्रन्थमें उसके सेठ का नाम भी कामदत्त ही बताया गया है जिसने

यह जैन मन्दिर बनाकर और इसमें जिनेन्द्र भगवान की मूर्त्ति के साथ कामदेव और रति की मूर्त्ति भी विराजमान करके जैनधर्म के प्रचार का जबरदस्त मार्ग खोला था इस ही सेठ की सन्तान में कन्या मदनमती हुई थी जिसके पिताका नाम तो साक्षात् ही सेठ कामदेव था, गरज़ मदनसुन्दरी की इस कथा में शुरू से आखिर तक सब जगह कामदेव का ही झण्डा फहराया गया है और उस ही की दुन्दभी बजाई गई है, अब पाठकों को इख्तियार है कि चाहें वह इस कथा को धर्मकथा बताकर अपनी २ जाति के अजान जवान स्त्री पुरुषों को इस कथा के पढ़ने सुनने की प्रेरणा करें या इसको कामकथा समझ कर उनको इससे दूर रखने की कोशिश करें ।

(६१) आगे एक दिन वसुदेव के पास एक बहुत ही सुन्दर कन्या प्रभावती आई, कब आई ? कथा की बनी हुई प्रथा के अनुसार उस ही समय जब कि वह रमणी मदनसुन्दरी के साथ आनन्द से सोरहा था, कैसे सोरहा था, बहुत देर तक भोग करने से थककर, परन्तु इस कथा में इस बात के जाहिर करने की ज़रूरत ही क्या थी कि उस दिन वह बहुत देर तक भोग करने से थककर सोया था, कथा के पढ़ने सुनने वालों की कामवासना को जगाने के सिवाय ऐसा कथन करने का कारण और क्या हो सकता है, परन्तु क्या आचार्य महाराज ऐसा कर सकते हैं, हरगिज़ नहीं, तब यह ग्रन्थ किसने बनाया है, कोई हो परन्तु आचार्य महाराज की तो यह करतूत किसी तरह भी नहीं हो सकती है और, वह कन्या वसुदेव को वहां लेगई जहां सोमश्री कैद होरही थी, वह वसुदेव को देखकर बहुत खुश हुई जिससे उसकी छातियां भी मोटी मोटी और चमकदार होगई, शोक है कि ऐसे २ बे ज़रूरत कथनों को भी श्रीतीर्थंकर भगवान का वचन बनाकर नहीं मालूम भगवान की दिव्यध्वनी को क्यों बदनाम किया गया है कामदेव की दुन्दभी बजाने के सिवाय इसका और कारण ही क्या हो सकता है ।

(६२) यह तो यहां तो बेचारी कन्या प्रभावती भी वसुदेव के रूप पर आशक्त होगई ।

(६३) वसुदेव फिर सूर्पक द्वारा उठाकर लेजाया गया और आकाश से पटका गया और सदा की तरह पानी में ही गिराया गया, इस कथा के बनावटी होने का क्या इससे भी बढ़िया कोई सबूत हो सकता है ।

(६४) आगे कामदेव की एक और लीला सुनिये कि एक तपसी ने मन्त्र के ज़ोर से एक राजा की कन्या को अपने वश में कर रखा था, यहां तक कि तपस्वी के मरने पर वह कन्या उसकी हड्डियों का सेहरा बनाकर पागलों की तरह फिरती थी

क्या इस कथन से स्त्रियों के हृदय पर यह भय नहीं बैठता है कि यदि हम किसी कामी पुरुष की खोटी इच्छा पूरी करने को राजी न हों तो वह हमको किसी मन्त्र वादी के द्वारा अपने वश में करके हमारा सर्वनाश कर सकता है।

(६५) वसुदेव फिर हरा गया, कब हरा गया, जब वह अपनी प्यारी प्रभावती के साथ अनन्द से सोरहा था, परन्तु ऐसा कथन करनेकी जरूरत ही क्या थी क़दम क़दम पर कामदेव की दुन्दभी बजती रहने और कथा पढ़ने सुनने वालों के हृदय की काम अग्नि में हरवक्त फूंक लगती रहने के सिवाय और क्या जरूरत हो सकती है।

(६६) यहां फिर वसुदेव हरा गया और आकाश से पटका गया और पानीमें ही गिराया गया, क्या यह आश्चर्य की बात नहीं है कि वसुदेव के सब ही बैरियों ने इसको पानी ही में पटका।

(६७) इसके बाद फिर नीलकण्ठ ने वसुदेव को आकाश से पटका और नियम के अनुसार पानी में ही डाला।

(६८) इसके बाद फिर सूर्पक ने वसुदेव को आकाश मे लेजाकर पटका और पानी में ही पटका, पाठको यदि इन तमाम कथनों से भी यह कथा बनावटी सिद्ध नही होती है तो हमारा विशेष लिखना भी व्यर्थ ही है।

(६९) हां अन्त में इतना लिखना जरूरी समझते हैं कि कथा में बालचन्द्रा जैसी कन्याओं का कथन करके जो यह दिखाया गया है कि उसकी माता वसुदेव के पास गई और कहने लगी कि बालचन्द्रा के प्राण तब ही बच सकते हैं जब आप उससे विवाह करके उसके मन को आनन्दित करें, ऐसे कथनों से जवान जवान कन्याओं पर बुरा असर पड़ता है इस वास्ते चाहे आप इन कथाओं को सच्ची माने या धर्म की समझें या अधर्म की परन्तु कृपा कर कन्याओं से तो इन कथाओं को दूर ही रक्खें।

(७०) और लीजिये, कंस जब अपनी माता के गर्भ में था तो इसके माता पिता ने इसको सन्दूक मे बन्द करके नदी में बहा दिया था, एक शराब बेचने वाली कलालनी ने उसको निकाल लिया और पाला, इस कथा से यह भी सिद्ध कर दिया गया है कि चौथेकाल में शराब बेचने वाले कलालों की भी जाति थी, और शराब की दूकानें थी, जिससे सतयुग में किसी बात की कसर न रहजाय बल्कि इस पञ्चम काल की अपेक्षा कुछ बातें बढ़ी चढ़ी ही हों।

(७१) वसुदेव की कथा के अन्त मे कामरस का एक नवीन चसका और भी ले लीजिये, वह यह कि कंस का भाई मुनि था और तप के प्रसाद से अवधिज्ञानी

होगया था, वह एक दिन आहार को कंस के घर गया, भाभी ने मुनि महाराज से छेड की, छेड भी कोई छोटी मोटी नहीं बल्कि बहुत बढ़िया और ऐसी बढिया कि कोई भाभी अपने मामूली गृहस्थी देवरों से भी ऐसी छेड न करती होगी, अर्थात् मुनि महाराज की बहिन के रजस्वला समयके चीथड़े मुनि महाराज के सामने रखकर दिल लगी उडाने लगी कि देखो यह तुम्हारी बहिन के आनन्द वस्त्र हैं, पाठकगण ! आप आश्चर्य में आकर जरूर दांत तले उङ्गली देंगे और शायद यह आशङ्का करेंगे कि कंस की स्त्री अपने देवर को मुनि नहीं समझती होगी परन्तु ऐसा नहीं था बल्कि वह उसको बडा पक्का और सच्चा मुनि समझती थी और उस पर पूरी श्रद्धा रखती थी, क्योंकि उसके इस मजाक के जवाब में जब मुनि महाराजने यह कहा कि इस ही मेरी बहिन का पुत्र तेरे पति का मारने वाला होगा तो यह बात सुनकर उस स्त्री के होश उड गये और वह कांप उठी और विचार ने लगी कि मुनि महाराज का वचन हर्गिज़ भी अन्यथा नहीं हो सकता है।

पाठकगण ! अब तो आप भी यह बात कह उठे होंगे कि बेशक यह कथा बनावटी है श्रीसर्वज्ञ भाषित नहीं है और न आचार्य महाराज की कही हुई है बल्कि साफ़ २ कामकथा है और किसी तरह भी धर्मकथा नहीं कही जा सकती है।

मंगी की कथा।

एक राजाकी कन्याका नाम मंगी था जो अपने पति वज्रमुष्टि को बहुत प्यारी थी और इस ही कारण अपनी सास की कुछ सेवा नहीं करती थी, एक दिन वज्रमुष्टि कहीं बाहर गया था कि मंगी की सास ने मंगी को एक सांप से कटवा कर मार दिया और मरघट में डलवा दिया, घर आने पर वज्रमुष्टिको बडा रञ्ज हुआ और वह मरघट में गया, वहा एक मुनि विराजमान थे, वज्रमुष्टि ने प्रार्थना करी कि अगर मेरी मङ्गी जी जावे तो मैं हज़ार कमलों से तुम्हारी पूजा करू, मुनिराज के चरण स्पर्श से जहर उतर कर मंगी जिन्दा होगई, वज्रमुष्टि फूल लेने चला गया, वहां एक चोर भी छिपा बैठा था, उसको देख मंगी का चित्त उस पर चलायमान होगया और वह काम से व्याकुल होकर चोर के पास आकर कहने लगी कि मुझे ग्रहण करलो, चोर ने कहा कि तुम्हारा पति जबरदस्त है इस वास्ते मैं तुझे ग्रहण नहीं कर सकता हूं, यह सुन कामसे व्याकुल वह मंगी बोली कि उसका तुम कुछ भी डर मत करो क्योंकि उसके तो मैं इस खड्ग से टुकड़े २ कर डालूंगी, चोर ने कहा कि ऐसा करने पर मैं तुम्हें स्वीकार कर लूंगा, इतनेमें वज्रमुष्टी कमल लेकर आगया और मुनि-

राज की पूजा करने लगा, पूजा करते २ जब वह मस्तक नवाने लगा तो मंगी ने उसके मारने को खड्ग उठाया, चोर ने उसका हाथ पकड़ लिया और फिर छिप गया। मंगी अपना दोष छिपाने को तुरन्त जमीन पर गिर पड़ी. वज्रमुष्टि को कुछ भी हाल मालूम न होसका और प्यार से पूछने लगा कि तुझे किसने डराया, आखिर वह अपने घर चले गये, चोर को वैराग्य आगया, फिर कुछ दिन पीछे मंगी भी आर्यका होगई।

समीक्षा।

(१) मंगी की यह कथा तो कामकथा की रही सही पूर्त्ति करने वाली है इस वास्ते इसके विषय मे तो कुछ अधिक कहने की आवश्यकता ही नहीं है।